वीर ज्ञानोदय ग्रंथमाला का पुष्प नं. 28
ISBN 978-93-80353-83-8

पंचपरमेष्ठी विधान

–रचयित्री–

जम्बूद्वीप रचना की पावन प्रेरिका

गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी

शरदपूर्णिमा महोत्सव, 11 अक्टूबर 2011 को जम्बूद्वीप-हस्तिनापुर में
पूज्य गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी द्वारा घोषित
''प्रथम पट्टाचार्य श्री वीरसागर वर्ष'' के अन्तर्गत प्रकाशित

-प्रकाशक-

दिगम्बर जैन त्रिलोक शोध संस्थान

जम्बूद्वीप-हस्तिनापुर (मेरठ) उ.प्र.-250404, फोन नं.- (01233) 280184, 280994
Website : www.jambudweep.org
E-mail : jambudweeptirth@gmail.com

COURTESY–JAIN BOOK DEPOT
C/o Shri Nabhi Kumar Manav Kumar Jain
C-4, Opp. PVR Plaza, Cannaught Place, New Delhi-1
Ph.-011-23416101-02-03/Website : www.jainbookdepot.com

पन्द्रहवाँ संस्करण 2200 प्रतियाँ | वीर नि. सं. 2538, द्वि. भाद्रपद शुक्ला 4 दशलक्षण महापर्व-19 सितम्बर 2012 | मूल्य 20/-रुपये

दिगम्बर जैन त्रिलोक शोध संस्थान द्वारा संचालित

वीर ज्ञानोदय ग्रन्थमाला

इस ग्रन्थमाला में दिगम्बर जैन आर्षमार्ग का पोषण करने वाले हिन्दी, संस्कृत, प्राकृत, कन्नड़, अंग्रेजी, गुजराती, मराठी आदि भाषाओं के न्याय, सिद्धान्त, अध्यात्म, भूगोल-खगोल, व्याकरण आदि विषयों पर लघु एवं वृहद् ग्रंथों का मूल एवं अनुवाद सहित प्रकाशन होता है। समय-समय पर धार्मिक लोकोपयोगी लघु पुस्तिकाएं भी प्रकाशित होती रहती हैं।

–: संस्थापिका एवं प्रेरणास्रोत :–

परमपूज्य गणिनीप्रमुख आर्यिकाशिरोमणि श्री ज्ञानमती माताजी

–: मार्गदर्शन :–

प्रज्ञाश्रमणी आर्यिका श्री चन्दनामती माताजी

–: निर्देशक एवं सम्पादक :–

कर्मयोगी पीठाधीश स्वस्तिश्री रवीन्द्रकीर्ति स्वामी जी

–: प्रबंध सम्पादक :–

बाल ब्र. जीवन प्रकाश जैन

(सर्वाधिकार प्रकाशकाधीन)

प्रथम संस्करण (1980), द्वितीय (1982),....., ग्यारहवाँ (2006)-2200, बारहवाँ संस्करण (2008)-2200 प्रतियाँ, तेरहवाँ संस्करण (2009)-2200 प्रतियाँ, इस प्रकार इस विधान की लगभग 29200 प्रतियाँ प्रकाशित हो चुकी हैं।
चौदहवाँ संस्करण (2011)-2200 प्रतियाँ

कम्पोजिंग–ज्ञानमती नेटवर्क, जम्बूद्वीप-हस्तिनापुर (मेरठ) उ.प्र.

सम्पादकीय.....

– कर्मयोगी पीठाधीश स्वस्तिश्री रवीन्द्रकीर्ति स्वामी जी

जैन परम्परा में उपयोग तीन प्रकार का माना गया है। अशुभोपयोग शुभोपयोग एवं शुद्धोपयोग। इन तीनों उपयोगों में से कोई-न-कोई उपयोग प्रतिक्षण जीव में चला ही करता है जिसमें से अशुभोपयोग तो दुर्गति का कारण पाप रूप है। इसलिए सर्वथा हेय है। बात है उपादेयता की शेष दोनों शुभोपयोग एवं शुद्धोपयोग उपादेय हैं। चूंकि गृहस्थ श्रावक के शुभोपयोग के अलावा शुद्धोपयोग हो नहीं सकता इसलिए शुभोपयोग ही उपादेय ठहरता है। शुद्धोपयोग वीतराग चारित्र से अविनाभावी है और वीतराग चारित्र निर्ग्रन्थ मुनियों के ही सम्भव है। अतः श्रावकों को प्रयत्नपूर्वक शुभोपयोग की भावना में ही प्रवर्तन करना चाहिए। पूजन-पाठ, सामायिक, दान आदि समस्त धार्मिक क्रियाएँ पुण्य रूप हैं और शुभोपयोग हैं इसलिए श्रावकों द्वारा शांति विधान, सिद्धचक्र विधान आदि मण्डल विधान करने की परम्परा प्राचीन काल से चली आ रही है उसी श्रृंखला में पूज्य गणिनी प्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी ने इन्द्रध्वज, कल्पद्रुम, सर्वतोभद्र, तीन लोक, शान्ति विधान, ऋषिमण्डल आदि अनेक छोटे-बड़े विधानों की रचना की है।

पंचपरमेष्ठी नमस्कार रूप महामंत्र के गुण अचिन्त्य हैं इस पंचपरमेष्ठी विधान को करके आप अपने जीवन में सुख-शांति समृद्धि की स्थापना करें यही मंगल कामना है।

प्रस्तावना.....

–प्रज्ञाश्रमणी आर्यिका चन्दनामती

णमोकार मंत्र जिसमें कि पंचपरमेष्ठी को नमस्कार किया गया है सभी प्रकार के पापों को नष्ट करने वाला है और सभी मंगलों में उत्तम प्रथम मंगल है।

मनुष्य अहर्निश सुख प्राप्त करने की चेष्टा करता है किन्तु विश्व के अशान्त वातावरण के कारण उसे एक क्षण को भी शान्ति नहीं मिलती है। चित्त की चंचलता के कारण ही अशान्ति का अनुभव करना पड़ता है क्योंकि अनावश्यक संकल्प विकल्प ही दुःखों के कारण हैं। मोहजन्य वासनाएँ मानव के हृदय का मन्थन कर विषयों की ओर प्रेरित करती हैं। जिससे व्यक्ति के जीवन में अशान्ति बनी रहती है।

जब राग द्वेष से युक्त आत्मा अच्छे या बुरे कार्यों में लगती है तब कर्मरूपी रज ज्ञानावरणादि रूप से आत्मा में प्रवेश करता है। यह कर्मचक्र जीव के साथ अनादि काल से चला आ रहा है संसार में स्थित जीव के राग-द्वेष रूप परिणाम होते हैं, परिणामों से नये-नये कर्म बंधते हैं, कर्मों से चतुर्गतियों में जन्म लेना पड़ता है, जन्म लेने से शरीर होता है, शरीर में इन्द्रियाँ होती हैं, इन्द्रियों से विषय का ग्रहण होता है। विषयों के ज्ञान से रागद्वेष परिणाम होते हैं। इस तरह संसाररूपी चक्र में पड़े जीवों के भावों से कर्म और कर्मों से भाव होते रहते हैं। कर्मों के बीजभूत रागद्वेष को पंचपरमेष्ठी की साधना द्वारा नष्ट किया जा सकता है।

तात्पर्य यह है कि किसी भी वस्तु की महिमा उसके गुणों के द्वारा व्यक्त होती है। पंचपरमेष्ठी नमस्कार रूप महामंत्र के गुण अचिन्त्य हैं। इसमें इस प्रकार की विद्युत शक्ति विद्यमान है जिससे उसके उच्चारण मात्र से पाप और अशुभ का विध्वंस हो जाता है तथा परम विभूति और कल्याण की प्राप्ति होती है। इस महामन्त्र की महिमा व्यक्त करने वाली अनेक रचनायें हैं उसी में यह पंचपरमेष्ठी विधान भी एक महान अनुष्ठान रूप है। मात्र पांच परमेष्ठी का नमस्कार रूप मन्त्र महामन्त्र है इसके स्मरण से तमाम अशुभ टल जाते हैं।

आशा है इस पंचपरमेष्ठी विधान को श्रावक जन श्रद्धा-भक्तिपूर्वक स्वयं करेगें और दूसरों की अनुमोदना करने से पाप का क्षालन करते रहेगें।

विधान की रचयित्री राष्ट्रगौरव, गणिनीप्रमुख, आर्यिकाशिरोमणि

श्री ज्ञानमती माताजी का संक्षिप्त-परिचय

-प्रज्ञाश्रमणी आर्यिका चन्दनामती

जन्मस्थान—टिकैतनगर (बाराबंकी) उ.प्र.

जन्मतिथि—आसोज सुदी 15 (शरदपूर्णिमा) वि. सं. 1991, (22 अक्टूबर सन् 1934)

जाति—अग्रवाल दि. जैन, **गोत्र**—गोयल, **नाम**—कु. मैना

माता-पिता—श्रीमती मोहिनी देवी एवं श्री छोटेलाल जैन

आजन्म ब्रह्मचर्य व्रत—ई. सन् 1952 में बाराबंकी में शरदपूर्णिमा के दिन

क्षुल्लिका दीक्षा—चैत्र कृ. 1, ई. सन् 1953 को महावीरजी अतिशय क्षेत्र (राज.) में आचार्यरत्न श्री देशभूषण जी महाराज से। नाम— क्षुल्लिका वीरमती

आर्यिका दीक्षा—वैशाख कृ. 2, ई. सन् 1956 को माधोराजपुरा (राज.) में चारित्रचक्रवर्ती 108 आचार्य श्री शांतिसागर जी की परम्परा के प्रथम पट्टाधीश आचार्य श्री वीरसागर जी महाराज के करकमलों से।

साहित्यिक कृतित्व—अष्टसहस्री, समयसार, नियमसार, मूलाचार, कातंत्र-व्याकरण, षट्खण्डागम आदि ग्रंथों के अनुवाद/टीकाएं एवं 250 विशिष्ट ग्रंथों की लेखिका।

डी.लिट्. की मानद् उपाधि—सन् 1995 में अवध वि.वि. (फैजाबाद) द्वारा एवं तीर्थंकर महावीर विश्वविद्यालय मुरादाबाद द्वारा 8 अप्रैल 2012 को "डी.लिट्." की मानद उपाधि से विभूषित।

तीर्थ निर्माण प्रेरणा—हस्तिनापुर में जंबूद्वीप तेरहद्वीप, तीनलोक आदि रचनाओं के निर्माण, शाश्वत तीर्थ अयोध्या का विकास एवं जीर्णोद्धार, प्रयाग-इलाहाबाद (उ.प्र.) में तीर्थंकर ऋषभदेव तपस्थली तीर्थ का निर्माण, तीर्थंकर जन्मभूमियों का विकास यथा- भगवान महावीर जन्मभूमि कुण्डलपुर (नालंदा-बिहार) में 'नंद्यावर्त महल' नामक तीर्थ निर्माण, भगवान पुष्पदंतनाथ की जन्मभूमि काकन्दी तीर्थ (निकट गोरखपुर-उ.प्र.) का विकास, भगवान पार्श्वनाथ केवलज्ञानभूमि अहिच्छत्र तीर्थ पर तीस चौबीसी मंदिर, हस्तिनापुर में जम्बूद्वीप स्थल पर भगवान शांतिनाथ-कुंथुनाथ-अरहनाथ की 31-31 फुट उत्तुंग खड्गासन प्रतिमा, मांगीतुंगी में निर्माणाधीन 108 फुट उत्तुंग भगवान ऋषभदेव की विशाल प्रतिमा इत्यादि।

महोत्सव प्रेरणा—पंचवर्षीय जम्बूद्वीप महामहोत्सव, भगवान ऋषभदेव अंतर्राष्ट्रीय निर्वाण महामहोत्सव, अयोध्या में भगवान ऋषभदेव महाकुंभ मस्तकाभिषेक, कुण्डलपुर महोत्सव, भगवान पार्श्वनाथ जन्मकल्याणक तृतीय सहस्राब्दि महोत्सव, दिल्ली में कल्पद्रुम महामण्डल विधान का ऐतिहासिक आयोजन इत्यादि। **विशेषरूप से 21 दिसम्बर 2008 को जम्बूद्वीप स्थल पर विश्वशांति अहिंसा सम्मेलन का आयोजन हुआ, जिसका उद्घाटन भारत की राष्ट्रपति श्रीमतीप्रतिभा देवीसिंह पाटील द्वारा किया गया।**

शैक्षणिक प्रेरणा—'जैन गणित और त्रिलोक विज्ञान' पर अंतर्राष्ट्रीय संगोष्ठी, राष्ट्रीय कुलपति सम्मेलन, इतिहासकार सम्मेलन, न्यायाधीश सम्मेलन एवं अन्य अनेक राष्ट्रीय-अंतर्राष्ट्रीय स्तर के सेमिनार आदि।

रथ प्रवर्तन प्रेरणा—जम्बूद्वीप ज्ञानज्योति (1982 से 1985), समवसरण श्रीविहार (1998 से 2002), महावीर ज्योति (2003-2004) का भारत भ्रमण।

इस प्रकार नित्य नूतन भावनाओं की जननी पूज्य माताजी चिरकाल तक इस वसुधा को सुशोभित करती रहें, यही मंगल कामना है।

दिगम्बर जैन त्रिलोक शोध संस्थान-संक्षिप्त परिचय

-कर्मयोगी पीठाधीश स्वस्तिश्री रवीन्द्रकीर्ति स्वामीजी

दिगम्बर जैन त्रिलोक शोध संस्थान की स्थापना पूज्य गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी की प्रेरणा से सन् 1972 में राजधानी दिल्ली में हुई थी। संस्थान का मुख्य कार्यालय सन् 1974 से हस्तिनापुर में प्रारंभ हुआ। इस संस्थान के अन्तर्गत अनेक गतिविधियाँ हस्तिनापुर में तथा अन्यत्र चल रही हैं—

1. सन् 1972 से वीर ज्ञानोदय ग्रंथमाला के अन्तर्गत लाखों ग्रंथ प्रकाशित हो रहे हैं।
2. सन् 1974 से इस संस्थान के मुखपत्र के रूप में 'सम्यग्ज्ञान' हिन्दी मासिक पत्रिका का निरंतर प्रकाशन हो रहा है।
3. सन् 1974 से 1985 तक हस्तिनापुर में जम्बूद्वीप रचना का निर्माण कार्य हुआ।
4. सन् 1974 से अब तक जम्बूद्वीप रचना के अतिरिक्त अनेक जिनमंदिरों का निर्माण हुआ है—कमल मंदिर, तीन मूर्ति मंदिर, ध्यान मंदिर, शांतिनाथ मंदिर, वासुपूज्य मंदिर, ॐ मंदिर, सहस्रकूट मंदिर, विद्यमान बीस तीर्थंकर मंदिर, आदिनाथ मंदिर, अष्टापद मंदिर, ऋषभदेव कीर्तिस्तंभ, स्वर्णिम तेरहद्वीप रचना, तीन लोक रचना, नवग्रहशांति जिनमंदिर एवं श्री शांतिनाथ-कुंथुनाथ-अरहनाथ की 31-31 फुट उत्तुंग प्रतिमाओं की स्थापना ।
5. जम्बूद्वीप पुस्तकालय जिसमें लगभग 15000 ग्रंथ संग्रहीत हैं।
6. णमोकार महामंत्र बैंक जिसमें भक्तों द्वारा लिखकर भेजे गये करोड़ों णमोकार मंत्र जमा किये जाते हैं।
7. समय-समय पर शिक्षण-प्रशिक्षण शिविरों तथा संगोष्ठियों के आयोजन कियेजाते हैं।
8. यात्रियों के शुद्ध भोजन के लिए राजा श्रेयांस भोजनालय का संचालन।
9. यात्रियों के ठहरने के लिए आधुनिक सुविधायुक्त डीलक्स फ्लैट्स वाली कई धर्मशालाओं तथा कोठियों एवं बंगलों का निर्माण किया गया है।
10. जम्बूद्वीप परिक्रमा के लिए नौका विहार, ऐरावत हाथी तथा मनोरंजन हेतु मिनी ट्रेन, झूले आदि हैं।
11. ज्ञानमती कला मंदिरम् में हस्तिनापुर के प्राचीन इतिहास से संबंधित झाँकियाँ हैं।
12. तीर्थंकर जन्मभूमियों की वंदना एवं धार्मिक फिल्मों का प्रदर्शन करने वाले थियेटर से समन्वित गणिनी ज्ञानमती हीरक जयंती एक्सप्रेस।

दिल्ली, मेरठ, मुजफ्फरनगर, हरिद्वार, झाँसी, तिजारा आदि से जम्बूद्वीप स्थल तक आने के लिए दिन भर बसें मिलती रहती हैं।

दि. जैन त्रिलोक शोध संस्थान के अन्तर्गत भगवान महावीर जन्मभूमि कुण्डलपुर (नालंदा) बिहार में भव्य नंद्यावर्त महल तीर्थ तथा प्रयाग-इलाहाबाद (उ.प्र.) में निर्मित तीर्थंकर ऋषभदेव तपस्थली तीर्थ का भी संचालन होता है।

जम्बूद्वीप एवं अन्य रचनाओं के दर्शन हेतु हस्तिनापुर पधारकर आध्यात्मिक एवं भौतिक सुख की प्राप्ति करें।

वीर ज्ञानोदय ग्रन्थमाला के शिरोमणि संरक्षक

1. श्रीमती निर्मला जैन ध.प. स्व. श्री प्रेमचन्द्र जैन, तत्पुत्र प्रदीप कुमार जैन, रेखावली, दिल्ली-6।
2. श्रीमती सुमन जैन ध.प. श्री दिग्विजय सिंह जैन, इंदौर।
3. श्री महावीर प्रसाद जैन संघपति, जी-19, साऊथ एक्सटेन्शन, नई दिल्ली।
4. श्री महेन्द्र पाल हरेन्द्र कुमार जैन, सूरजमल विहार, दिल्ली।
5. श्रीमती मोहनी जैन ध.प. श्री सुनील जैन, प्रीत विहार, दिल्ली।
6. श्री देवेन्द्र कुमार जैन (धारूहेड़ा वाले) गुड़गाँव (हरि.)।
7. श्रीमती शारदा रानी जैन ध.प. स्व. रिखबचंद जैन, बाहुबली एन्क्लेव, दिल्ली-92।
8. डॉ. देवेन्द्र कुमार जैन, भोपाल (म.प्र.)
9. श्रीमती संगीता जैन ध.प. श्री संजीव कुमार जैन, शेरकोट (बिजनौर) उ.प्र.
10. श्री अनिल कुमार जैन, दरियागंज, दिल्ली
11. श्री बी.डी. मदनाइक, मुम्बई
12. श्री धनकुमार जैन, बाहुबली एन्क्लेव, दिल्ली-92।
13. श्री जितेन्द्र कुमार जैन एवं श्रीमती सुनीता जैन कोटड़िया, फ्लोरिडा, यू.एस.ए.
14. श्रीमती विमला देवी जैन ध.प. श्री ओमप्रकाश जैन, स्वालिक नगर, हरिद्वार (उत्तराखंड)।
15. श्री अमित जैन एवं संभव जैन सुपुत्र श्रीमती अनीता जैन ध.प. श्री मूलचंद जैन पाटनी, दिसपुर (कामरूप) आसाम।
16. श्रीमती अजित कुमारी जैन ध.प. श्री महेन्द्र कुमार जैन, ओबेदुल्लागंज (रायसेन) म.प्र.।
17. श्री नाभिकुमार जैन, जैन बुक डिपो, सी-4, पी.वी.आर. प्लाजा के पीछे, कनॉट प्लेस, नई दिल्ली।

वीर ज्ञानोदय ग्रन्थमाला के परम संरक्षक

1. श्री माँगीलाल बाबूलाल पहाड़े, हैदराबाद (आन्ध्र प्रदेश)।
2. डॉ. प्रकाशचन्द्र जैन, 792 विवेकानंदपुरी, सिविल लाइन, सीतापुर (उ.प्र.)।
3. श्री सुमत प्रकाश जैन, गज्जू कटरा, शाहदरा, दिल्ली।
4. श्री सुनील कुमार जैन, द्वारा-सुनील टैक्सटाईल्स, सरधना (मेरठ) उ.प्र.।
5. स्व. श्री प्रकाश चंद अमोलक चंद जैन सर्राफ, सनावद (म.प्र.)।
6. श्री प्रद्युम्न कुमार जवेरी, रोकड़ियालेन, बोरीवली (वेस्ट) मुंबई।
7. श्रीमती उर्मिला देवी ध.प. श्री कान्ती प्रसाद जैन, ऋषभ विहार, दिल्ली।
8. श्रीमती उषा जैन ध.प. श्री विमल प्रसाद जैन, ऋषभ विहार, दिल्ली।
9. श्री आनन्द प्रकाश जैन (सौरम वाले) , गांधीनगर, दिल्ली।
10. श्रीमती सरिता जैन ध.प. श्री राजकुमार जैन, किदवई नगर, कानपुर।
11. स्व. श्रीमती कैलाशवती ध.प. श्री कैलाश चन्द्र जैन , तोपखाना बाजार, मेरठ।
12. श्री भानेन्द्र कुमार जैन, द्वारा-श्री विद्या जैन, भगत सिंह मार्ग, जयपुर।
13. श्री प्रदीप कुमार शान्तिलाल बिलाला, अनूपनगर, इंदौर, (म.प्र.)।
14. श्री सुरेशचंद पवन कुमार जैन, बाराबंकी (उ.प्र.)।
15. श्री नथमल पारसमल जैन, कलकत्ता-7।
16. श्रीमती स्व. शांताबाई ध.प. श्री कमलचंद जैन, सनावद (म.प्र.)।
17. श्री रूपचंद जैन कटारिया, दिल्ली
18. श्री आशु जैन, कालका जी, नई दिल्ली
19. श्री प्रद्युम्न कुमार जैन छोटी सा., श्री अमरचंद जैन सर्राफ, लखनऊ (उ.प्र.)
20. श्रीमती शशि जैन ध.प. श्री दिनेशचंद जैन, शिवालिक नगर, हरिद्वार (उत्तराखंड)।

चौबीस तीर्थंकरों की सोलह जन्मभूमियों की नामावली

महानुभावों,

अपने नगर के जिनमंदिरों में चौबीस तीर्थंकरों की सोलह जन्मभूमियों के नाम निम्नानुसार लिखवाएं एवं इन तीर्थों की यात्रा करके पुण्यलाभ प्राप्त करें।

1. अयोध्या (फैजाबाद-उ.प्र.)	–श्री ऋषभदेव भगवान
	–श्री अजितनाथ भगवान
	–श्री अभिनंदननाथ भगवान
	–श्री सुमतिनाथ भगवान
	–श्री अनंतनाथ भगवान
2. श्रावस्ती (बहराइच-उ.प्र.)	–श्री संभवनाथ भगवान
3. कौशाम्बी (उ.प्र.)	–श्री पद्मप्रभु भगवान
4. वाराणसी (उ.प्र.)	–श्री सुपार्श्वनाथ भगवान
	–श्री पार्श्वनाथ भगवान
5. चन्द्रपुरी (वाराणसी) उ.प्र.	–श्री चन्द्रप्रभु भगवान
6. काकन्दी (देवरिया नि.-गोरखपुर) उ.प्र.	–श्री पुष्पदंतनाथ भगवान
7. भद्रिकापुरी	–श्री शीतलनाथ भगवान
8. सिंहपुरी (सारनाथ) उ.प्र.	–श्री श्रेयांसनाथ भगवान
9. चम्पापुरी (भागलपुर-बिहार)	–श्री वासुपूज्यनाथ भगवान
10. कम्पिलपुरी (फर्रूक्खाबाद-उ.प्र.)	–श्री विमलनाथ भगवान
11. रत्नपुरी (फैजाबाद-उ.प्र.)	–श्री धर्मनाथ भगवान
12. हस्तिनापुर (मेरठ-उ.प्र.)	–श्री शांतिनाथ भगवान
	–श्री कुन्थुनाथ भगवान
	–श्री अरनाथ भगवान
13. मिथिलापुरी	–श्री मल्लिनाथ भगवान
	–श्री नमिनाथ भगवान
14. राजगृही (नालंदा-बिहार)	–श्री मुनिसुव्रतनाथ भगवान
15. शौरीपुर (बटेश्वर-उ.प्र.)	–श्री नेमिनाथ भगवान
16. कुण्डलपुर (नालंदा-बिहार)	–श्री महावीर भगवान

–निवेदक–

अखिल भारतवर्षीय दिगम्बर जैन तीर्थंकर जन्मभूमि विकास कमेटी

प्रधान कार्यालय –**जम्बूद्वीप-हस्तिनापुर (मेरठ) उ.प्र.,** फोन नं.-01233-280184, 292943

विषयानुक्रमणिका

क्रमांक	विषय	पृष्ठ संख्या
१.	नवदेवता पूजन	१
२.	श्री पंचपरमेष्ठी विधान मंगलाचरण	५
३.	श्री पंचपरमेष्ठी समुच्चय पूजा	७
४.	अर्हन्त पूजा	१२
५.	सिद्ध पूजा	२७
६.	आचार्य पूजा	३४
७.	उपाध्याय पूजा	४६
८.	सर्वसाधु पूजा	५६
९.	प्रशस्ति	६९
१०.	आरती	७०

पंचपरमेष्ठी विधान का नक्शा

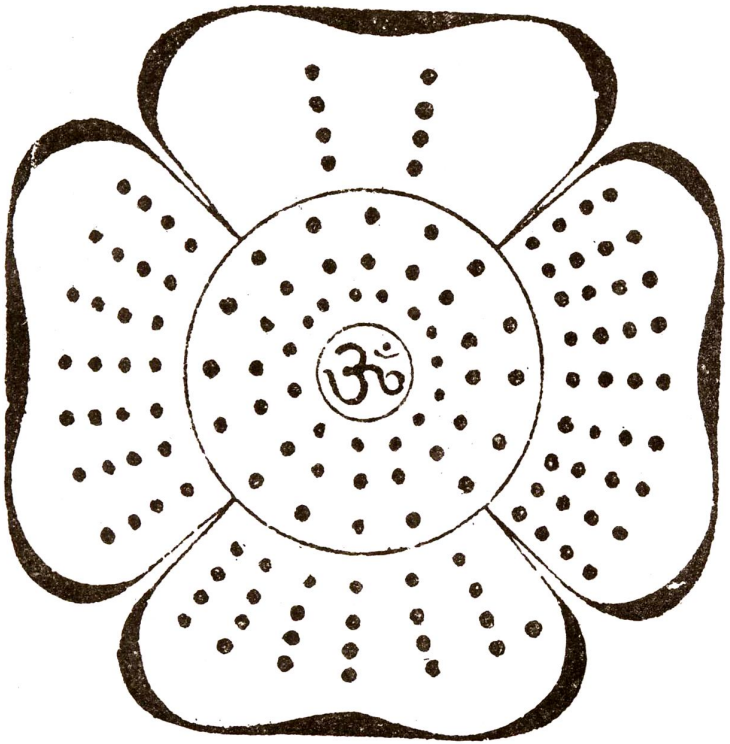

नवदेवता पूजन

–गणिनी आर्यिका ज्ञानमती

—गीता छन्द —

अरिहंत सिद्धाचार्य पाठक, साधु त्रिभुवन वंद्य हैं।
जिनधर्म जिनआगम जिनेश्वर, मूर्ति जिनगृह वंद्य हैं।।
नव देवता ये मान्य जग में, हम सदा अर्चा करें।
आह्वान कर थापें यहाँ, मन में अतुल श्रद्धा धरें।।

ॐ ह्रीं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधु जिनधर्मजिनागमजिन-चैत्यचैत्यालयसमूह! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननं।

ॐ ह्रीं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधु जिनधर्मजिनागमजिन-चैत्यचैत्यालयसमूह! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।

ॐ ह्रीं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधु जिनधर्मजिनागमजिन-चैत्यचैत्यालयसमूह! अत्र मम सन्निहितो भव-भव वषट् सन्निधीकरणं।

—अथाष्टक —

गंगानदी का नीर निर्मल, बाह्य मल धोवे सदा।
अंतर मलों के क्षालने को, नीर से पूजूँ मुदा।।
नवदेवताओं की सदा जो, भक्ति से अर्चा करें।
सब सिद्धि नवनिधि रिद्धि मंगल, पाय शिवकांता वरें।।१।।

ॐ ह्रीं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिन-चैत्यचैत्यालयेभ्यो जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

कर्पूर मिश्रित गंध चंदन, देह ताप निवारता।
तुम पाद पंकज पूजते, मन ताप तुरतहिं वारता।।
नवदेवताओं की सदा जो, भक्ति से अर्चा करें।
सब सिद्धि नवनिधि रिद्धि मंगल, पाय शिवकांता वरें।।२।।

ॐ ह्रीं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिन-चैत्यचैत्यालयेभ्यो संसारतापविनाशनाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

क्षीरोदधी के फेन सम सित, तंदुलों को लायके।
उत्तम अखंडित सौख्य हेतु, पुंज नवसु चढ़ायके।।

नवदेवताओं की सदा जो, भक्ति से अर्चा करें।
सब सिद्धि नवनिधि रिद्धि मंगल, पाय शिवकांता वरें।।३।।

ॐ ह्रीं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिन-चैत्यचैत्यालयेभ्यो अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

चम्पा चमेली केवड़ा, नाना सुगन्धित ले लिये।
भव के विजेता आपको, पूजत सुमन अर्पण किये।।
नवदेवताओं की सदा जो, भक्ति से अर्चा करें।
सब सिद्धि नवनिधि रिद्धि मंगल, पाय शिवकांता वरें।।४।।

ॐ ह्रीं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिन-चैत्यचैत्यालयेभ्यो कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

पायस मधुर पकवान मोदक, आदि को भर थाल में।
निज आत्म अमृत सौख्य हेतू, पूजहूँ नत भाल मैं।।
नवदेवताओं की सदा जो, भक्ति से अर्चा करें।
सब सिद्धि नवनिधि रिद्धि मंगल, पाय शिवकांता वरें।।५।।

ॐ ह्रीं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिन-चैत्यचैत्यालयेभ्यो क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कर्पूर ज्योति जगमगे, दीपक लिया निज हाथ में।
तुम आरती तम वारती, पाऊँ सुज्ञान प्रकाश मैं।।
नवदेवताओं की सदा जो, भक्ति से अर्चा करें।
सब सिद्धि नवनिधि रिद्धि मंगल, पाय शिवकांता वरें।।६।।

ॐ ह्रीं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिन-चैत्यचैत्यालयेभ्यो मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

दशगंधधूप अनूप सुरभित, अग्नि में खेऊँ सदा।
निज आत्मगुण सौरभ उठे, हों कर्म सब मुझसे विदा।।
नवदेवताओं की सदा जो, भक्ति से अर्चा करें।
सब सिद्धि नवनिधि रिद्धि मंगल, पाय शिवकांता वरें।।७।।

ॐ ह्रीं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिन-चैत्यचैत्यालयेभ्यो अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

अंगूर अमरख आम्र अमृत, फल भराऊँ थाल में।
उत्तम अनूपम मोक्ष फल के, हेतु पूजूँ आज मैं।।

नवदेवताओं की सदा जो, भक्ति से अर्चा करें।
सब सिद्धि नवनिधि रिद्धि मंगल, पाय शिवकांता वरें।।८।।

ॐ ह्रीं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिन-चैत्यचैत्यालयेभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

जल गंध अक्षत पुष्प चरु, दीपक सुधूप फलार्घ्य ले।
वर रत्नत्रय निधि लाभ यह, बस अर्घ्य से पूजत मिले।।
नवदेवताओं की सदा जो, भक्ति से अर्चा करें।
सब सिद्धि नवनिधि रिद्धि मंगल, पाय शिवकांता वरें।।९।।

ॐ ह्रीं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिन-चैत्यचैत्यालयेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा — **जलधारा से नित्य मैं, जग की शांति हेत।**
नवदेवों को पूजहूँ, श्रद्धा भक्ति समेत।।१०।।

शांतये शांतिधारा।

नानाविध के सुमन ले, मन में बहु हरषाय।
मैं पूजूँ नव देवता, पुष्पांजली चढ़ाय।।११।।

दिव्य पुष्पांजलिः।

***जाप्य —*ॐ ह्रीं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागम जिनचैत्य-चैत्यालयेभ्यो नमः।**

जयमाला

सोरठा — **चिच्चिंतामणिरत्न, तीन लोक में श्रेष्ठ हों।**
गाऊँ गुणमणिमाल, जयवंते वर्तो सदा।।१।।

(चाल-हे दीनबन्धु श्रीपति.....)

जय जय श्री अरिहंत देवदेव हमारे।
जय घातिया को घात सकल जंतु उबारे।।
जय जय प्रसिद्ध सिद्ध की मैं वंदना करूँ।
जय अष्ट कर्ममुक्त की मैं अर्चना करूँ।।२।।
आचार्य देव गुण छत्तीस धार रहे हैं।
दीक्षादि दे असंख्य भव्य तार रहे हैं।।

जैवंत उपाध्याय गुरु ज्ञान के धनी।
सन्मार्ग के उपदेश की वर्षा करें घनी।।३।।
जय साधु अठाईस गुणों को धरें सदा।
निज आत्मा की साधना से च्युत न हों कदा।।
ये पंचपरमदेव सदा वंद्य हमारे।
संसार विषम सिंधु से हमको भी उबारें।।४।।
जिनधर्म चक्र सर्वदा चलता ही रहेगा।
जो इसकी शरण ले वो सुलझता ही रहेगा।।
जिन की ध्वनि पीयूष का जो पान करेंगे।
भव रोग दूर कर वे मुक्ति कांत बनेंगे।।५।।
जिन चैत्य की जो वंदना त्रिकाल करे हैं।
वे चित्स्वरूप नित्य आत्म लाभ करे हैं।।
कृत्रिम व अकृत्रिम जिनालयों को जो भजें।
वे कर्मशत्रु जीत शिवालय में जा बसें।।६।।
नव देवताओं की जो नित आराधना करें।
वे मृत्युराज की भी तो विराधना करें।।
मैं कर्मशत्रु जीतने के हेतु ही जजूँ।
सम्पूर्ण ''ज्ञानमती'' सिद्धि हेतु ही भजूँ।।७।।

दोहा — **नवदेवों को भक्तिवश, कोटि कोटि प्रणाम।**
भक्ती का फल मैं चहूँ, निजपद में विश्राम।।८।।

ॐ ह्रीं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्य-चैत्यालयेभ्यो जयमाला पूर्णार्घ्यं.....।

शांतिधारा, पुष्पांजलिः।

—गीता छंद —

जो भव्य श्रद्धाभक्ति से, नवदेवता पूजा करें।
वे सब अमंगल दोष हर, सुख शांति में झूला करें।।
नवनिधि अतुल भंडार ले, फिर मोक्ष सुख भी पावते।
सुखसिंधु में हो मग्न फिर, यहाँ पर कभी न आवते।।९।।

।। इत्याशीर्वादः ।।

श्री पंचपरमेष्ठी विधान

—मंगल स्तोत्र—

दोहा—सौ इंद्रों से वंद्य नित, पंचपरम गुरुदेव।
तिनके पद अरविंद की, करूँ सदा मैं सेव।।1।।
त्रिभुवन में त्रयकाल में, जन जन के हितकार।
नमूं नमूं मैं भक्तिवश, होवें मम सुखकार।।2।।

—कुसुमलता छंद—

सुरपति नरपति नाग इंद्र मिल, तीन छत्र धारें प्रभु पर।
पंच महाकल्याणक सुख के, स्वामी मंगलमय जिनवर।।
अनंत दर्शन ज्ञान वीर्य सुख, चार चतुष्टय के धारी।
ऐसे श्री अर्हंत परम गुरू, हमें सदा मंगलकारी।।3।।

ध्यान अग्निमय बाण चलाकर, कर्म शत्रु को भस्म किये।
जन्म जरा अरु मरण रूप, त्रयनगर जला त्रिपुरारि हुए।।
प्राप्त किये शाश्वत शिवपुर को, नित्य निरंजन सिद्ध बनें।
ऐसे सिद्ध समूह हमें नित, उत्तम ज्ञान प्रदान करें।।4।।

पंचाचारमयी पंचाग्नी में, जो तप तपते रहते।
द्वादश अंगमयी श्रुतसागर में, नित अवगाहन करते।।
मुक्ति श्री के उत्तम वर हैं, ऐसे श्री आचार्य प्रवर।
महाशील व्रत ज्ञान ध्यानरत, देवें हमें मुक्ति सुखकर।।5।।

यह संसार भयंकर दुखकर, घोर महावन है विकराल।
दुखमय सिंह व्याघ्र अतितीक्षण, नख अरु डाढ़ सहित विकराल।।
ऐसे वन में मार्ग भ्रष्ट, जीवों को मोक्ष मार्ग दर्शक।
हित उपदेशी उपाध्याय गुरु, का मैं नमन करूँ संतत।।6।।

उग्र उग्र तप करें त्रयोदश, क्रिया चरित में सदा कुशल।
क्षीण शरीरी धर्म ध्यान अरु, शुक्ल ध्यान में नित तत्पर।।
अतिशय तप लक्ष्मी के धारी, महा साधुगण इस जग में।
महा मोक्षपथगामी गुरुवर, हमको रत्नत्रय निधि दें।।7।।

इस संस्तव में जो जन पंच-परम गुरु का वंदन करते।
वे गुरुतर भव लता काट कर, सिद्ध सौख्य संपत लभते।।
कर्मेंधन के पुंज जलाकर, जग में मान्य पुरुष बनते।
पूर्ण ज्ञानमय परमाल्हादक, स्वात्म सुधारस को चखते।।8।।

दोहा- अर्हत् सिद्धाचार्य औ, पाठक साधु महान।
पंच परम गुरु हों मुझे, भव-भव में सुखदान।।9।।

—शंभु छंद—

अर्हन् के छ्यालिस गुण सिद्धों, के आठ सूरि के छत्तिस हैं।
श्री उपाध्याय के पंचवीस, गुण साधु के अट्ठाइस हैं।।
पांचों परमेष्ठी के गुणगण, एक सौ तेतालिस बतलाये।
जो इनका नाम स्मरण करे, वह झट भवदधि से तर जाये।।10।।

दोहा- पंच परम गुरु यद्यपि, गुण अनंत समवेत।
तदपि मुख्य गुण की रचूँ, पूजा निजगुण हेत।।11।।

इति जिनयज्ञप्रतिज्ञापनाय मंडलस्योपरि पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

पूजा नं0-1

श्री पंचपरमेष्ठीसमुच्चय पूजा

— अडिल्ल छन्द —

अर्हत्सिद्धाचार्य, उपाध्याय साधु हैं।
कहे पंचपरमेष्ठी, गुणमणि साधु हैं।।
भक्ति भाव से करूँ, यहाँ पर थापना।
पूजूँ श्रद्धा धार, करूँ हित आपना।।1।।

ॐ ह्रीं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्याय सर्वसाधुसमूह! अत्र अवतर अवतर संवौषट्।

ॐ ह्रीं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्याय सर्वसाधुसमूह! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।

ॐ ह्रीं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्याय सर्वसाधुसमूह! अत्र मम सन्निहतो भव भव वषट् सन्निधीकरणं।

अथाष्टकं (चाल-नन्दीश्वर श्री जिनधाम.....)

सुर सरिता का जल स्वच्छ, कंचन भृंग भरूँ।
भव तृषा बुझावन हेतु, तुम पद धार करूँ।।
श्री पंचपरमगुरुदेव, पंचमगति दाता।
भव भ्रमण पंच हर लेव, पूजूँ पद त्राता।।1।।

ॐ ह्रीं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुभ्यो जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं.....।

मलयज चंदन कर्पूर, गंध सुगंध करूँ।
भव दाह करो सब दूर, चरणन चर्च करूँ।।
श्री पंचपरमगुरुदेव, पंचमगति दाता।
भव भ्रमण पंच हर लेव, पूजूँ पद त्राता।।2।।

ॐ ह्रीं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुभ्यो संसारतापविनाशनाय चंदनं.....।

पयसागर फेन समान, अक्षत धोय लिया।
अक्षय गुण पाने हेतु, पुंज चढ़ाय दिया।।

श्री पंचपरमगुरुदेव, पंचमगति दाता।
भव भ्रमण पंच हर लेव, पूजूँ पद त्राता।।3।।

ॐ ह्रीं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुभ्यो अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं.....।

मचकुंद कमल वकुलादि, सुरभित पुष्प लिया।
मदनारिजयी पदकंज, पूजत सौख्य लिया।।
श्री पंचपरमगुरुदेव, पंचमगति दाता।
भव भ्रमण पंच हर लेव, पूजूँ पद त्राता।।4।।

ॐ ह्रीं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुभ्यो कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं....।

घेवर फेनी रस पूर्ण, मोदक शुद्ध लिया।
मम क्षुधा रोग कर चूर्ण, तुम पदपूज किया।।
श्री पंचपरमगुरुदेव, पंचमगति दाता।
भव भ्रमण पंच हर लेव, पूजूँ पद त्राता।।5।।

ॐ ह्रीं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुभ्यो क्षुधारोग निवारणाय नैवेद्यं....।

दीपक की ज्योति प्रकाश, दशदिश ध्वांत हरे।
तुम पूजत मन को मोह, हर विज्ञान भरे।।
श्री पंचपरमगुरुदेव, पंचमगति दाता।
भव भ्रमण पंच हर लेव, पूजूँ पद त्राता।।6।।

ॐ ह्रीं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुभ्यो मोहांधकारविनाशनाय दीपं....।

दशगंध सुगंधित धूप, खेवत कर्म जरें।
सब कर्म कलंक विदूर, आतम शुद्ध करें।।
श्री पंचपरमगुरुदेव, पंचमगति दाता।
भव भ्रमण पंच हर लेव, पूजूँ पद त्राता।।7।।

ॐ ह्रीं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुभ्यो अष्टकर्मविध्वंसनाय धूपं....।

अंगूर अनार खजूर, फल के थाल भरे।
तुम पद अर्चज भव दूर, शिवफल प्राप्त करे।।
श्री पंचपरमगुरुदेव, पंचमगति दाता।
भव भ्रमण पंच हर लेव, पूजूँ पद त्राता।।8।।

ॐ ह्रीं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं....।

जल चंदन अक्षत पुष्प, नेवज दीप लिया।
वर धूप फलों से पूर्ण, तुम पद अर्घ्य किया।।
श्री पंचपरमगुरुदेव, पंचमगति दाता।
भव भ्रमण पंच हर लेव, पूजूँ पद त्राता।।9।।

ॐ ह्रीं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं....।

—दोहा—

पंचपरमगुरु के चरण, जल की धारा देत।
निज मन शीतल हेतु अर, तिहुं जग शांति हेत।।10।।

शांतये शांतिधारा।

वकुल मल्लिका सित कमल, पुष्प सुगंधित लाय।
पुष्पांजलि कर जिन चरण, पूजूँ मन हरषाय।।11।।

दिव्य पुष्पांजलिः।

जाप्य- **ॐ ह्रीं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्याय सर्वसाधुभ्यो नमः**

(108 सुगंधित पुष्प या लवंग से जाप्य करना।)

जयमाला

—सोरठा—

भवजलनिधी जिहाज, पंचपरम गुरु जगत में।
तिनकी गुणमणिमाल, गाऊँ भक्ति वश सही।।1।।

(चाल-हे दीनबन्धु....।)

जैवंत अरिहंत देव, सिद्ध अनंता।
जैवंत सूरि उपाध्याय साधु महंता।।
जैवंत तीन लोक में ये पंचगुरु हैं।
जैवंत तीन काल के भी पंचगुरु हैं।।1।।

अर्हंत देव के हैं छियालीस गुण कहे।

जिन नाम मात्र से ही पाप शेष ना रहे।।
दशजन्म के अतिशय हैं चमत्कार से भरे।
कैवल्यज्ञान होत ही अतिशय जु दश धरें।।2।।

चौदह कहे अतिशय हैं देव रचित बताये।
तीर्थंकरों के ये सभी चौंतीस हैं गाये।।
हैं आठ प्रातिहार्य जो वैभव विशेष हैं।
आनंत चतुष्टय सुचार सर्व श्रेष्ठ हैं।।3।।

जो जन्म मरण आदि दोष आठदश कहे।
अर्हंत में न हों अतः निर्दोष वे रहें।।
सर्वज्ञ वीतराग हित के शास्ता हैं जो।
है बार बार वंदना अरिहंत देव को।।4।।

सिद्धों के आठ गुण प्रधान रूप से गाये।
जो आठ कर्म के विनाश से हैं बताये।।
यों तो अनंत गुण समुद्र सर्व सिद्ध हैं।
उनको है वंदना जो सिद्धि में निमित्त हैं।।5।।

आचार्य देव के प्रमुख छत्तीस गुण कहे।
दीक्षादि दे चउसंघ के नायक गुरु रहें।।
पच्चीस गुणों से युक्त उपाध्याय गुरु हैं।
जो मात्र पठन पाठनादि में ही निरत हैं।।6।।

जो आत्मा की साधना में लीन रहे हैं।
वे मूलगुण अट्ठाइसों से साधु कहे हैं।।
आराधना सुचार की आराधना करें।
हम इन त्रिभेद साधु की उपासना करें।।7।।

अरिहंत सिद्ध दो सदा आराध्य गुरु कहे।
त्रयविधि मुनी आराधकों की कोटि में रहें।।
अर्हंत सिद्ध देव हैं शुद्धातमा कहे।

शुद्धात्म आराधक हैं सूरि स्वात्मा लहें।।8।।

गुरुदेव उपाध्याय प्रतिपादकों में हैं।
शुद्धातमा के साधकों को साधु कहे हैं।।
पांचों ये परम पद में सदा तिष्ठ रहे हैं।
इस हेतु से परमेष्ठी ये नाम लहे हैं।।9।।

इन पाँच के हैं इक सौ तितालीस गुण कहे।
इन मूलगुणों से भी संख्यातीत गुण रहें।।
उत्तर गुणों से युक्त पाँच सुगुरु हमारे।
जिनका सुनाम मंत्र भवोदधि से उबारे।।10।।

हे नाथ! इसी हेतु से तुम पास में आया।
सम्यक्त्व निधी पाय के तुम कीर्ति को गाया।।
बस एक विनती पे मेरी ध्यान दीजिये।
कैवल्य 'ज्ञानमती' का ही दान दीजिए।।11।।

—दोहा—

त्रिभुवन के चूड़ामणि, अर्हंत सिद्ध महान।
सूरी पाठक साधु को, नमूँ नमूँ गुणखान।।12।।

ॐ ह्रीं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुभ्यो जयमाला पूर्णार्घ्यंनिर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा। परिपुष्पांजलिः।

—दोहा—

पंचपरमगुरु की शरण जो लेते भविजीव।
रत्नत्रय निधि पाय के भोगें सौख्य सदीव।।13।।

।। इत्याशीर्वादः ।।

पूजा नं0 2

अर्हन्त पूजा

—स्थापना-गीताछन्द—

अरिहंत प्रभु ने घातिया को, घात निज सुख पा लिया।
छ्यालीस गुण के नाथ अठरह, दोष का सब क्षय किया।।
शत इन्द्र नित पूजें उन्हें, गणधर मुनी वंदन करें।
हम भी प्रभो! तुम अर्चना, के हेतु अभिनंदन करें।।1।।

ॐ ह्रीं णमोअरिहंताणं श्री अर्हत्परमेष्ठि समूह! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननं।

ॐ ह्रीं णमोअरिहंताणं श्री अर्हत्परमेष्ठि समूह! अत्र तिष्ठ तिष्ठ स्थापनं।

ॐ ह्रीं णमोअरिहंताणं श्री अर्हत्परमेष्ठि समूह! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणं।

अथाष्टकं-स्रग्विणी छंद

साधु के चित्त सम स्वच्छ जल ले लिया।
कर्ममल क्षालने तीन धारा किया।।
सर्व अरिहंत को पूजहूँ भक्ति से।
कर्म अरि को हनूँ भक्ति की युक्ति से।।1।।

ॐ ह्रीं णमो अरिहंताणं अर्हत्परमेष्ठिभ्यो जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

गंध सौगंध्य से नाथ को पूजते।
सर्व संताप से भव्यजन छूटते।।
सर्व अरिहंत को पूजहूँ भक्ति से।
कर्म अरि को हनूँ भक्ति की युक्ति से।।2।।

ॐ ह्रीं णमो अरिहंताणं अर्हत्परमेष्ठिभ्यो संसारतापविनाशनाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

धौत अक्षत लिये स्वर्ण के थाल में।
पुंज धर के जजूं नाय के भाल मैं।।
सर्व अरिहंत को पूजहूँ भक्ति से।
कर्म अरि को हनूँ भक्ति की युक्ति से।।3।।

ॐ ह्रीं णमो अरिहंताणं अर्हत्परमेष्ठिभ्यो अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

केतकी कुंद मचकुंद बेला लिये।
कामहर नाथ के पाद अर्पण किये।।
सर्व अरिहंत को पूजहूँ भक्ति से।
कर्म अरि को हनूँ भक्ति की युक्ति से।।4।।

ॐ ह्रीं णमो अरिहंताणं अर्हत्परमेष्ठिभ्यो कामबाणविनाशनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

मुद्ग मोदक इमरती भरे थाल में।
आत्म सुख हेतु मैं अर्पिहूँ हाल में।।
सर्व अरिहंत को पूजहूँ भक्ति से।
कर्म अरि को हनूँ भक्ति की युक्ति से।।5।।

ॐ ह्रीं णमो अरिहंताणं अर्हत्परमेष्ठिभ्यो क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

स्वर्ण के दीप में ज्योति कर्पूर की।
नाथ पद पूजते मोह तम चूरती।।
सर्व अरिहंत को पूजहूँ भक्ति से।
कर्म अरि को हनूँ भक्ति की युक्ति से।।6।।

ॐ ह्रीं णमो अरिहंताणं अर्हत्परमेष्ठिभ्यो मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

धूप को अग्नि में खेवते शीघ्र ही।
कर्म शत्रू जलें सौख्य हो शीघ्र ही।।

सर्व अरिहंत को पूजहूँ भक्ति से।
कर्म अरि को हनूँ भक्ति की युक्ति से।।7।।

ॐ ह्रीं णमो अरिहंताणं अर्हत्परमेष्ठिभ्यो अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

सेव अँगूर दाड़िम अनन्नास ले।
मोक्ष फल हेतु जिन पाद पूजूँ भले।।
सर्व अरिहंत को पूजहूँ भक्ति से।
कर्म अरि को हनूँ भक्ति की युक्ति से।।8।।

ॐ ह्रीं णमो अरिहंताणं अर्हत्परमेष्ठिभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्घ्य लेकर जजूँ नाथ को आज मैं।
स्वात्म संपत्ति का पाऊँ साम्राज मैं।।
सर्व अरिहंत को पूजहूँ भक्ति से।
कर्म अरि को हनूँ भक्ति की युक्ति से।।9।।

ॐ ह्रीं णमो अरिहंताणं अर्हत्परमेष्ठिभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा- **जिन पद में धारा करूँ, चउसंघ शांती हेत।**
शांती धारा जगत में, आत्यन्तिक सुख देत।।10।।

शांतये शांतिधारा।

चंपक हर सिंगार बहु, पुष्प सुगंधित सार।
पुष्पांजलि से पूजते, होवे सौख्य अपार।।11।।

दिव्य पुष्पांजलिः।

अथ प्रत्येक अर्घ्य

सोरठा- **परमानन्द समेत, श्री अरिहंत जिनेश हैं।**
निजगुण संपत्ति हेतु, तिनके गुणमणि को जजूँ।।1।।

इति मंडले प्रथमदलस्योपरि पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

जन्म के दश अतिशय

नरेंद्र छंद- **जन्म समय से ही दश अतिशय, प्रभु के तन में सोहे।**
सौधर्मेन्द्र बना नित किंकर, प्रभु के मन को मोहे।।
देह पसेव रहित है प्रभु का, यह अतिशय मन भावे।
जो जन पूजें भक्ति भाव से, परमानन्द सुख पावें।।1।।

ॐ ह्रीं स्वेदरहित सहजातिशयधारक अर्हत्परमेष्ठिभ्य: अर्घ्यं....।

मात गर्भ से जन्में फिर भी, मलमूत्रादि रहित हैं।
मुनि मन को निर्मल करने में, सचमुच आप निमित्त हैं।।
सुर नर असुर इंद्र विद्याधर, बहु रुचि से गुण गावें।
जो जन पूजें भक्ति भाव से, परमानन्द सुख पावें।।2।।

ॐ ह्रीं निर्मलत्व सहजातिशयधारक अर्हत्परमेष्ठिभ्य: अर्घ्यं....।

प्रभु शरीर में श्वेत दुग्ध सम, रुधिर रहे अतिशायी।
रुधिर लाल नहिं यह शुभ अतिशय, सब जनमन सुखदायी।।
गणधरगण नित हर्षित मन से, प्रभु का ध्यान लगावें।
जो जन पूजें भक्ति भाव से, परमानन्द सुख पावें।।3।।

ॐ ह्रीं क्षीरगौर रुधिरत्व सहजातिशय सहितार्हत्परमेष्ठिभ्य: अर्घ्यं...।

तन सुडौल आकार मनोहर, समचतुरस्र कहावे।
जिस जिस अवयव का जितना है, माप वही मन भावे।।
इस अतिशययुत श्री जिनवर को, हम भी पूजें ध्यावें।
जो जन पूजें भक्ति भाव से, परमानन्द सुख पावें।।4।।

ॐ ह्रीं समचतुरस्रसंस्थान सहजातिशय सहितार्हत्परमेष्ठिभ्य: अर्घ्यं...।

वज्रवृषभनाराच संहनन, उत्तम प्रभु का जानों।
अद्भुत महिमाशाली जिनवर, का शुभ देह बखानों।
इस अतिशय को हम नित पूजें, अतिशय भक्ति बढ़ावें।
जो जन पूजें भक्ति भाव से, परमानन्द सुख पावें।।5।।

ॐ ह्रीं वज्रवृषभनाराचसंहनन सहजातिशय सहितार्हत्परमेष्ठिभ्य: अर्घ्यं..।

कोटिक कामदेव छवि लाजें, अतिशय रूप मनोहर।
इंद्र हजार नेत्र कर निरखें, तृप्त न होवे तो पर।।
सुन्दर सुन्दर सब परमाणू, प्रभु के तन बस जावें।
जो जन पूजें भक्ति भाव से, परमानन्द सुख पावें।।6।।

ॐ ह्रीं अतिशयरूप सहजातिशयसमन्वितार्हत्परमेष्ठिभ्य: अर्घ्यं....।

महा सुगंधित प्रभु का तन है, देव सुमन से बढ़कर।
अन्य सुरभि नहिं है इस जग में, उस सदृश अति सुखकर।।
जन्म समय से ही यह अतिशय, सब जन मन को भावे।
जो जन पूजें भक्ति भाव से, परमानन्द सुख पावें।।7।।

ॐ ह्रीं सौगन्ध्य शरीर सहजातिशयसमन्वितार्हत्परमेष्ठिभ्य: अर्घ्यं...।

एक हजार आठ शुभ लक्षण, प्रभु के तन में सोहें।
सब सर्वोत्तम गुण के सूचक, त्रिभुवन जन मन मोहें।।
जन्मकाल से ये शुभ लक्षण, सब इनको ललचावें।
जो जन पूजें भक्ति भाव से, परमानन्द सुख पावें।।8।।

ॐ ह्रीं अष्टोत्तरसहस्रशुभलक्षणसहितशरीरसहजातिशयधारकार्हत्परमेष्ठिभ्य: अर्घ्यं...।

तुलना रहित अतुलबल प्रभु तन, जग में है न किसी के।
इंद्र चक्रवर्ती से अद्भुत, शक्ती है जिन जी के।।
निज शक्ती के प्रगटन हेतू, हम भी प्रभु गुण गावें।
जो जन पूजें भक्ति भाव से परमानंद सुख पावें।।9।।

ॐ ह्रीं अप्रमितवीर्यसहजातिशयसमन्वितार्हत्परमेष्ठिभ्य: अर्घ्यं...।

प्रिय हित मधुर वचन अमृतसम, सबको तृप्त करे हैं।
बाल्यकाल में आप संग में, सुर शिशु आन रमे हैं।।
ऐसे अतिशय युत जिनवर की, हम नित पूज रचावें।
जो जन पूजें भक्ति भाव से, परमानंद सुख पावें।।10।।

ॐ ह्रीं प्रियहितवादित्वसहजातिशयसमन्वितार्हत्परमेष्ठिभ्य: अर्घ्यं...।

केवलज्ञान के दश अतिशय

रोला छन्द- चार चार सौ कोश, चारों दिश में जानो।
रहे सुभिक्ष सुकाल, यह जिन अतिशय मानो।।
केवलज्ञान दिनेश, प्रगट हुआ सुखदायी।
मैं पूजूँ शिरनाय, पाऊँ सुख अतिशायी।।1।।

ॐ ह्रीं गव्यूतिशतचतुष्टयसुभिक्षत्वघातिक्षयजातिशयसहितार्हत्परमेष्ठिभ्यः अर्घ्यं...।

ज्ञान उदय तत्काल, नभ में गमन करे हैं।
पांच सहस धनु जाय, ऊपर अधर चले हैं।।
असंख्यात सुर आय, जय जय ध्वनि उचरें हैं।
मैं पूजूँ शिरनाय, कर्म कलंक टरे हैं।।2।।

ॐ ह्रीं आकाशगमनघातिक्षयजातिशयसहितार्हत्परमेष्ठिभ्यः अर्घ्यं....।

जहाँ गमन प्रभु होय, प्राणी बध न वहाँ पे।
दयासिंधु जिनदेव, सबकी दया तहाँ पे।।
मुझ पर भी अब नाथ! दृष्टि दया की कीजे।
मैं पूजूं शिरनाय, रत्नत्रय निधि दीजे।।3।।

ॐ ह्रीं अदयाऽभावघातिक्षयजातिशयसहितार्हत्परमेष्ठिभ्यः अर्घ्यं....।

कोटि पूरब वर्ष, कुछ कम उसमें जानों।
कवलाहार विहीन, तन की स्थिति सरधानों।
यह अतिशय जिनराज, भविजन श्रद्धा ठानें।
जो पूजें मन लाय, कर्म कुलाचल हानें।।4।।

ॐ ह्रीं कवलाहाराभावघातिक्षयजातिशयसहितार्हत्परमेष्ठिभ्यः अर्घ्यं....।

घाति चतुष्टय घात, यह अतिशय सुखकारी।
सुर नर पशू अजीव, कृत उपसर्ग निवारी।।
गणधर मुनिगण नित्य, तुम चरणाम्बुज ध्यावें।
जो पूजें शिरनाय, अक्षय पद को पावें।।5।।

ॐ ह्रीं उपसर्गाभावघातिक्षयजातिशयसहितार्हत्परमेष्ठिभ्यः अर्घ्यं....।

समवसरण में आप, चारों दिश मुख दीखे।
पूरब मुख ही आप, या उत्तरमुख तिष्ठे।।
यह अतिशय तुम नाथ! सब जन को सुखदायी।
मैं पूजूँ शिरनाय, पाऊँ सुख अतिशायी।।6।।

ॐ ह्रीं चतुर्मुखत्वघातिक्षयजातिशयसहितार्हत्परमेष्ठिभ्यः अर्घ्यं....।

सब विद्या के आप, ईश्वर एक कहे हैं।
तुमको पूजत भव्य, सम्यग्ज्ञान लहे हैं।।
यह अतिशय तुम नाथ, सब जन मन को भावे।
मैं पूजूँ शिरनाय, मेरे कर्म नशावें।।7।।

ॐ ह्रीं सर्वविद्येश्वरत्वघातिक्षयजातिशयसहितार्हत्परमेष्ठिभ्यः अर्घ्यं....।

परमौदारिक देह, पुद्गलमय कहलावे।
फिर भी छाया हीन, यह अतिशय मन भावे।।
कल्पवृक्ष तुम देव, तुम छाया मैं चाहूँ।
पूजूँ अर्घ चढ़ाय, भव भव ताप नशाऊँ।।8।।

ॐ ह्रीं छायारहितघातिक्षयजातिशयसहितार्हत्परमेष्ठिभ्यः अर्घ्यं...।

नेत्र पलक नहिं होत, नहीं टिमकार प्रभू के।
सौम्यदृष्टि नासाग्र, अतिशयवान प्रभू के।।
अंतर्दृष्टी हेतु, मैं भी जिनपद ध्याऊँ।
पूजूं अर्घ चढ़ाय, फेर न भव में आऊँ।।9।।

ॐ ह्रीं पक्ष्मस्पंदरहितघातिक्षयजातिशयसमन्वितार्हत्परमेष्ठिभ्यः अर्घ्यं....।

नहीं बढ़े नख केश, केवलज्ञानी प्रभु के।
दिव्य शरीर विशेष, यह अतिशय हैं प्रभु के।।
सम्यक्दर्शन हेतु, मैं त्रयकाल जजूँ हूँ।
जन्म मरण भय दुःख, नाशन हेतु भजूँ हूँ।।10।।

ॐ ह्रीं समाननखकेशत्वघातिक्षयजातिशयसहितार्हत्परमेष्ठिभ्यः अर्घ्यं....।

देवकृत चौदह अतिशय

शंभु छंद

सर्वार्धमागधी भाषा है, तीर्थंकर की भवि सुखकारी।
सुरकृत यह अतिशय सब जन के, मन चमत्कार करता भारी।।
जो आतम निधि के इच्छुक हैं, वे इन अतिशय को ध्याते हैं।
इस हेतू हम अर्हत्प्रभु की, पूजा करके सुख पाते हैं।।1।।

ॐ ह्रीं सर्वार्धमागधीयभाषादेवोपनीतातिशयसहितार्हत्परमेष्ठिभ्य: अर्घ्यं..।

प्रभु का विहार हो जहां जहां, सब प्राणी मैत्री भाव धरें।
सब जाति विरोधी जीव वहां, आपस में वैर हरें विचरें।।
जो आतम निधि के इच्छुक हैं, वे इन अतिशय को ध्याते हैं।
इस हेतू हम अर्हत्प्रभु की, पूजा करके सुख पाते हैं।।2।।

ॐ ह्रीं सर्वजीवमैत्रीभावदेवोपनीतातिशयसहितार्हत्परमेष्ठिभ्य: अर्घ्यं....।

जब श्रीविहार होता प्रभु का, औ समवसरण जहां राजे हैं।
षट्ऋतु के सब फल फलते हैं, सब फूल खिलें अति भासे हैं।।
जो आतम निधि के इच्छुक हैं, वे इन अतिशय को ध्याते हैं।
इस हेतु हम अर्हत्प्रभु की, पूजा करके सुख पाते हैं।।3।।

ॐ ह्रीं सर्वर्तुफलादिशोभितरूपपरिणामदेवोपनीतातिशयसहितार्हत्परमेष्ठिभ्य:अर्घ्यं...।

दर्पण तलसम भूरत्नमयी, जहँ जहँ प्रभु विहरण करते हैं।
यह अतिशय सुरकृत मनहारी, भवि पूजत ही दुख हरते हैं।।
जो आतम निधि के इच्छुक हैं, वे इन अतिशय को ध्याते हैं।
इस हेतु हम अर्हत्प्रभु की, पूजा करके सुख पाते हैं।।4।।

ॐ ह्रीं आदर्शतलप्रतिमारत्नमयीमहीदेवोपनीतातिशयसहितार्हत्परमेष्ठिभ्य:अर्घ्यं...।

अनुकूल पवन है मन्द मन्द, सुरभित सुखकर जन मन हारी।
सब आधी व्याधी शोक टलें, स्पर्श पवन का हितकारी।।
जो आतम निधि के इच्छुक हैं, वे इन अतिशय को ध्याते हैं।
इस हेतु हम अर्हत्प्रभु की, पूजा करके सुख पाते हैं।।5।।

ॐ ह्रीं सुगंधितविहरणमनुगतवायुत्वदेवोपनीतातिशयसहितार्हत्परमेष्ठिभ्य:अर्घ्यं..।

जहँ जहँ प्रभु का हो श्रीविहार, सब जन परमानन्दित होते।
परमानन्दामृत पी करके, मुनिगण भी कर्म पंक धोते।।
जो आतम निधि के इच्छुक हैं, वे इन अतिशय को ध्याते हैं।
इस हेतू हम अर्हत्प्रभु की, पूजा करके सुख पाते हैं।।6।।

ॐ ह्रीं सर्वजनपरमानन्दत्वदेवोपनीतातिशयसहितार्हत्परमेष्ठिभ्य: अर्घ्यं...।

धूलि कंटक आदिक विरहित, भूमी अति स्वच्छ सदा दिखती।
प्रभु के विहार के अतिशय से, दुर्भिक्ष मरी व्याधी टरती।।
जो आतम निधि के इच्छुक हैं, वे इन अतिशय को ध्याते हैं।
इस हेतु हम अर्हत्प्रभु की, पूजा करके सुख पाते हैं।।7।।

ॐ ह्रीं वायुकुमारोपशमित धूलिकंटकादिदेवोपनीतातिशयसहितार्हत्परमेष्ठिभ्यअर्घ्यं..।

सुरभित गन्धोदक की वर्षा, भक्ती से मेघकुमार करें।
प्रभु का ही अतिशय पुण्यमहा, जो पूजें भवदधि पार करें।।
जो आतम निधि के इच्छुक हैं, वे इन अतिशय को ध्याते हैं।
इस हेतु हम अर्हत्प्रभु की, पूजा करके सुख पाते हैं।।8।।

ॐ ह्रीं मेघकुमारकृत गंधोदकवृष्टिदेवोपनीतातिशयसहितार्हत्परमेष्ठिभ्यअर्घ्यं..।

जहँ जहँ प्रभु चरणकमल धरते, तहँ तहँ शुभ स्वर्ण कमल खिलते।
सुरकृत अतिशय को देख देख, जन-जन के हृदय कमल खिलते।।
जो आतम निधि के इच्छुक हैं, वे इन अतिशय को ध्याते हैं।
इस हेतु हम अर्हत्प्रभु की, पूजा करके सुख पाते हैं।।9।।

ॐ ह्रीं चरणकमलतलरचितस्वर्णकमलदेवोपनीतातिशयसहितार्हत्परमेष्ठिभ्यअर्घ्यं...।

शाली आदिक सब धान्य भरित, खेती फल से झुक जाती है।
सुरकृत अतिशय से चहुँदिश में, सुन्दर पृथ्वी लहराती है।।
जो आतम निधि के इच्छुक हैं, वे इन अतिशय को ध्याते हैं।
इस हेतु हम अर्हत्प्रभु की, पूजा करके सुख पाते हैं।।10।।

ॐ ह्रीं फलभारनम्रशालिदेवोपनीतातिशयसहितार्हत्परमेष्ठिभ्य: अर्घ्यं....।

आकाश शरद् ऋतु के सदृश, सब दशों दिशा धूमादि रहित।
भक्ती से जन जन का मन भी, सब पाप पंक से हो विरहित।।
जो आतम निधि के इच्छुक हैं, वे इन अतिशय को ध्याते हैं।
इस हेतू हम अर्हत्प्रभु की, पूजा करके सुख पाते हैं।।11।।

ॐ ह्रीं शरत्कालवन्निर्मलगगनदिग्भागत्वदेवोपनीतातिशयसहितार्हत्परमेष्ठिभ्यअर्घ्यं...।

आवो आवो सब सुरगण मिल, आवो आवो जयकार करो।
जिनवर की अतिशय भक्ती कर, अब मोहराज पर वार करो।।
जो आतम निधि के इच्छुक हैं, वे इन अतिशय को ध्याते हैं।
इस हेतू हम अर्हत्प्रभु की, पूजा करके सुख पाते हैं।।12।।

ॐ ह्रीं एतैतेति चतुर्णिकायामरपरापराह्वानदेवोपनीतातिशयसहितार्हत्परमेष्ठिभ्यअर्घ्यं...।

वर धर्मचक्र सर्वाण्हयक्ष, मस्तक पर धारण करते हैं।
प्रभु के आगे चलते जग में, ये धर्मचक्र शुभ करते हैं।।
जो आतम निधि के इच्छुक हैं, वे इन अतिशय को ध्याते हैं।
इस हेतू हम अर्हत्प्रभु की, पूजा करके सुख पाते हैं।।12।।

ॐ ह्रीं धर्मचक्रचतुष्टयदेवोपनीतातिशयसहितार्हत्परमेष्ठिभ्यः अर्घ्यं...।

कलश ध्वज छत्र चमर दर्पण, भृंगार ताल औ सुप्रतीक।
ये मंगलद्रव्य आठ इनको, देवी कर धारें मंगलीक।।
जो आतम निधि के इच्छुक हैं, वे इन अतिशय को ध्याते हैं।
इस हेतू हम अर्हत्प्रभु की, पूजा करके सुख पाते हैं।।13।।

ॐ ह्रीं अष्टमंगलद्रव्यदेवोपनीतातिशयसहितार्हत्परमेष्ठिभ्यः अर्घ्यं...।

आठ प्रातिहार्य

गीता छन्द-

वर प्रातिहार्य अशोक तरुवर, शोक जन मन को हरे।
गारुत्मणी के पत्र सुन्दर, पवन प्रेरित थरहरें।।
इस प्रातिहार्य समेत जिनवर, की करें हम अर्चना।
सब रोग शोक समूल हर हम, करें यम की तर्जना।।1।।

ॐ ह्रीं अशोकवृक्षमहाप्रातिहार्यसहितार्हत्परमेष्ठिभ्यः अर्घ्यं....।

सुरगण करें सुरकल्पतरु के, पुष्प की वर्षा घनी।
अतिशय सुगंधित पुष्प पंक्ती, सर्व मन हरसावनी।।
इस प्रातिहार्य समेत जिनवर, की करें हम अर्चना।
सब रोग शोक समूल हर हम, करें यम की तर्जना।।2।।

ॐ ह्रीं सुरपुष्पवृष्टिमहाप्रातिहार्यसहितार्हत्परमेष्ठिभ्यः अर्घ्यं...।

प्रभु दिव्यध्वनि चउकोश तक, गम्भीर ध्वनि करती खिरे।
निर अक्षरी फिर भी असंख्यों, भव्य को तर्पित करे।।
इस प्रातिहार्य समेत जिनवर, की करें हम अर्चना।
सब रोग शोक समूल हर हम, करें यम की तर्जना।।3।।

ॐ ह्रीं दिव्यध्वनिमहाप्रातिहार्यसहितार्हत्परमेष्ठिभ्यः अर्घ्यं...।

चौंसठ चमर ढोरें अमर बहु, पुण्य संचय कर रहें।
ये चमर मानों कह रहे प्रभु, भक्त ऊरध गति लहें।।
इस प्रातिहार्य समेत जिनवर, की करें हम अर्चना।
सब रोग शोक समूल हर हम, करें यम की तर्जना।।4।।

ॐ ह्रीं चतुःषष्टिचामरमहाप्रातिहार्यसहितार्हत्परमेष्ठिभ्यः अर्घ्यं...।

बहुरत्न संयुत सिंहपीठ, जिनेश जिस पर राजते।
जो भव्य पूजें नाथ को वे, आत्म ज्योति प्रकाशते।।
इस प्रातिहार्य समेत जिनवर, की करें हम अर्चना।
सब रोग शोक समूल हर हम, करें यम की तर्जना।।5।।

ॐ ह्रीं सिंहासनमहाप्रातिहार्यसहितार्हत्परमेष्ठिभ्यः अर्घ्यं...।

प्रभु देह कांती प्रभामंडल, कोटि सूर्य तिरस्करे।
भवि सात भव उसमें निरख जिन, विभव लख शिरनत करें।।
इस प्रातिहार्य समेत जिनवर, की करें हम अर्चना।
सब रोग शोक समूल हर हम, करें यम की तर्जना।।6।।

ॐ ह्रीं भामंडलमहाप्रातिहार्यसहितार्हत्परमेष्ठिभ्यः अर्घ्यं...।

सुरदुंदुभी बजती विविध, भविलोक को हर्षित करे।
धुनि श्रवणकर जिन दर्शकर,जन पुण्य बहु अर्जित करें।।
इस प्रातिहार्य समेत जिनवर, की करें हम अर्चना।
सब रोग शोक समूल हर हम, करें यम की तर्जना।।7।।

ॐ ह्रीं सुरदुंदुभिमहाप्रातिहार्यसहितार्हत्परमेष्ठिभ्य: अर्घ्यं...।

जिननाथ के मस्तक उपरि त्रय, छत्र सुन्दर फिर रहें।
त्रैलोक्य की प्रभुता प्रभू की, है यही सब कह रहें।।
इस प्रातिहार्य समेत जिनवर, की करें हम अर्चना।
सब रोग शोक समूल हर हम, करें यम की तर्जना।।8।।

ॐह्रीं छत्रत्रयमहाप्रातिहार्यसहितार्हत्परमेष्ठिभ्य: अर्घ्यं...।

चार अनंत चतुष्टय

नाराच छंद-तीन लोक तीन काल की समस्त वस्तु को।
एक साथ जानता अनंत ज्ञान विश्व को।।
जो अनंत ज्ञान युक्त इन्द्र अर्चते जिन्हें।
पूजहूँ सदा उन्हें अनंत ज्ञान हेतु मैं।।1।।

ॐह्रीं अनंतज्ञानसहितार्हत्परमेष्ठिभ्य: अर्घ्यं...।

लोक औ अलोक के समस्त ही पदार्थ को।
एक साथ देखता अनन्त दर्श सर्व को।।
जो अनन्त दर्शयुक्त इन्द्र अर्चते जिन्हें।
पूजहूँ सदा उन्हें अनन्त दर्श हेतु मैं।।2।।

ॐ ह्रीं अनंतदर्शनसहितार्हत्परमेष्ठिभ्य: अर्घ्यं...।

बाधहीन जो अनन्त सौख्य भोगते सदा।
हो भले अनन्तकाल आवते न ह्यां कदा।।
वे अनन्त सौख्य युक्त इन्द्र अर्चते उन्हें।
पूजहूँ सदा तिन्हें अनन्त सौख्य हेतु मैं।।3।।

ॐ ह्रीं अनंतसौख्यसहितार्हत्परमेष्ठिभ्य: अर्घ्यं...।

जो अनन्तवीर्यवान अंतराय को हने।
तिष्ठते अनन्तकाल श्रम नहीं कभी उन्हें।।
वे अनन्त शक्तियुक्त इन्द्र अर्चते उन्हें।
पूजहूँ सदा तिन्हें अनन्त वीर्य हेतु मैं।।4।।

ॐ ह्रीं अनन्तवीर्यसहितार्हत्परमेष्ठिभ्य: अर्घ्यं...।

—पूर्णार्घ्य-शंभु छंद—

दश अतिशय जन्म समय से हों, दश केवल ज्ञान उदय से हों।
देवोंकृत चौदह अतिशय हों, चौंतिस अतिशय सब मिलकें हो।
वर प्रातिहार्य हैं आठ कहें, सु अनन्त चतुष्टय चार कहें।
इन छ्यालिस गुणयुत अर्हत को, हम पूजें वांछित सर्व लहें।।

ॐ ह्रीं षट्चत्वारिंशद् गुणसंयुक्तार्हत्परमेष्ठिभ्य: पूर्णार्घ्यं...।

शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलि:।

जाप्य-ॐ ह्रीं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुभ्यो: नम:।

जयमाला

—दोहा—

श्री अरिहंत जिनेन्द्र का, धरूँ हृदय में ध्यान।
गाऊँ गुणमणिमालिका, हरूँ सकल अपध्यान।।1।।

—शंभु छंद—

जय जय प्रभु तीर्थंकर जिनवर, तुम समवसरण में राज रहे।
जय जय अर्हत् लक्ष्मी पाकर, निज आतम में ही आप रहे।।
जन्मत ही दश अतिशय होते, तन में न पसेव न मल आदी।
पय समसित रुधिर सु समचतुष्क, संस्थान संहनन है आदी।।1।।

अतिशय सुरूप, सुरभित तनु है, शुभ लक्षण सहस आठ सोहें।
अतुलितबल प्रियहितवचन प्रभो, ये दशअतिशय जनमनमोहें।।

केवल रविप्रगटित होते ही दश, अतिशय अद्भुत ही मानों।
चारों दिश इक इक योजन तक, सुभिक्ष रहे यह सरधानो।।2।।
हो गगन गमन, नहिं प्राणीबध, नहिं भोजन नहिं उपसर्ग तुम्हें।
चउमुख दीखे सब विद्यापति, नहिं छाया नहिं टिमकार तुम्हें।।
नहिं नख औ केश बढ़ें प्रभु के, ये दश अतिशय सुखकारी हैं।
सुरकृत चौदह अतिशय मनहर, जो भव्यों को हितकारी हैं।।3।।

सर्वार्धमागधीया भाषा, सब प्राणी मैत्री भाव धरें।
सब ऋतु के फल और फूल खिलें, दर्पणवत् भूरलाभ धरें।।
अनुकूल सुगंधित पवन चले, सब जन मन परमानन्द भरें।
रजकंटक विरहित भूमि स्वच्छ, गंधोदक वृष्टी देव करें।।4।।

प्रभु पद तल कमल खिलें सुन्दर,शाली आदिक बहुधान्य फलें।
निर्मल आकाश दिशा निर्मल, सुरगण मिल जय जयकार करें।।
अरिहंत देव का श्रीविहार, वर धर्मचक्र चलता आगे।
वसुमंगल द्रव्य रहें आगे, यह विभव मिला जग के त्यागे।।5।।

तरुवर अशोक सुरपुष्प वृष्टि, दिव्यध्वनि, चौंसठ चमर कहें।
सिंहासन भामंडल सुरकृत, दुंदुभि छत्रत्रय शोभ रहें।।
ये प्रातिहार्य हैं आठ कहे, औ दर्शन ज्ञान सौख्य वीरज।
ये चार अनंत चतुष्टय हैं, सब मिलकर छ्यालिस गुण कीरत।।6।।

क्षुधा तृषा जन्म मरणादि दोष, अठदश विरहित निर्दोष हुए।
चउ घाति घात नवलब्धि पाय, सर्वज्ञ प्रभू सुखपोष हुए।।
द्वादशगण के भवि असंख्यात, तुम धुनि सुन हर्षित होते हैं।
सम्यक्त्व सलिल को पाकर के भवभव के कलिमल धोते हैं।।7।।

मैं भी भवदुःख से घबड़ा कर, अब आप शरण में आया हूँ।
सम्यक्त्व रतन नहिं लुट जावे, बस यही प्रार्थना लाया हूँ।।
संयम की हो पूर्ती भगवन्! औ मरण समाधी पूर्वक हो।
हो केवल ज्ञानमती सिद्धी, जो सर्व गुणों की पूरक हो।।8।।

—दोहा—

मोह अरी को हन हुए, त्रिभुवन पूजा योग्य।
नमो नमो अरिहंत को, पाऊँ सौख्य मनोज्ञ।।9।।

ॐ ह्रीं णमो अरिहंताणं अर्हत्परमेष्ठिभ्यः जयमाला अर्घ्यं....।
शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

—गीताछन्द—

अर्हंत सिद्धाचार्य पाठक, साधु को जो पूजते।
वे मोह को कर दूर मृत्यु, मल्ल को भी चूरते।।
अद्भुत सुखों को भोग क्रम से, मुक्तिलक्ष्मी वश करें।
कैवल्य अर्हंत 'ज्ञानमति' पा, पूर्ण सुख शाश्वत करें।।

।। इत्याशीर्वादः ।।

पूजा नं0-3

सिद्ध पूजा

— स्थापना-गीता छन्द —

श्री सिद्ध परमेष्ठी अनन्तानन्त त्रैकालिक कहे।
त्रिभुवन शिखर पर राजते, वह सासते स्थिर रहें।।
वे कर्म आठों नाश कर, गुण आठ धर कृतकृत्य हैं।
कर थापना मैं पूजहूँ, उनकों नमें नित भव्य हैं।।1।।

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं सिद्धपरमेष्ठिसमूह! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननं।
ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं सिद्धपरमेष्ठिसमूह! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।
ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं सिद्धपरमेष्ठिसमूह! अत्र मम सन्निहितो भवभव वषट् सन्निधीकरणं।

अथाष्टकं-पंचचामर छंद

अनादि से तृषा लगी न नीर से बुझी कभी।
अतः प्रभो त्रिधार देय नीर से जजूँ अभी।।
अनन्त सिद्धचक्र की सदा उपासना करूँ।
स्व जन्म मृत्यु मल्ल जीत सिद्धि अंगना वरूँ।।1।।

ॐ ह्रीं णमोसिद्धाणंश्रीसिद्धपरमेष्ठिभ्यः जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं..।

अनंत काल राग आग दाह में जला दिया।
उसी कि शांति हेतु गंध लाय चर्ण चर्चिया।।
अनन्त सिद्धचक्र की सदा उपासना करूँ।
स्व जन्म मृत्यु मल्ल जीत सिद्धि अंगना वरूँ।।2।।

ॐ ह्रीं णमोसिद्धाणंश्रीसिद्धपरमेष्ठिभ्यः संसारतापविनाशनाय चन्दनं...।

क्षणेक सुक्ख हेतु में नमा सभी कुदेव को।
अखंड सौख्य हेतु शालि से जजूँ सुदेव को।।

अनन्त सिद्धचक्र की सदा उपासना करूँ।
स्व जन्म मृत्यु मल्ल जीत सिद्धि अंगना वरूँ।।3।।

ॐ ह्रीं णमोसिद्धाणंश्रीसिद्धपरमेष्ठिभ्यः अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं....।

सुगन्ध पुष्पहार ले जजूँ समस्त सिद्ध को।
रतीश मल्ल जीत के लहूँ निजात्म सिद्धि को।।
अनन्त सिद्धचक्र की सदा उपासना करूँ।
स्व जन्म मृत्यु मल्ल जीत सिद्धि अंगना वरूँ।।4।।

ॐ ह्रीं णमोसिद्धाणंश्रीसिद्धपरमेष्ठिभ्यः कामवाणविध्वंसनाय पुष्पं....।

पियूष पिंड के समान मोदकादि लेय के।
निजात्म सौख्य हेतु मैं जजूँ प्रमाद खोय के।।
अनन्त सिद्धचक्र की सदा उपासना करूँ।
स्व जन्म मृत्यु मल्ल जीत सिद्धि अंगना वरूँ।।5।।

ॐ ह्रीं णमोसिद्धाणंश्रीसिद्धपरमेष्ठिभ्यः क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं....।

सुवर्ण दीप लेय नाथ पाद अर्चना करूँ।
समस्त मोह ध्वांत नाश ज्ञान ज्योति को भरूँ।।
अनन्त सिद्धचक्र की सदा उपासना करूँ।
स्व जन्म मृत्यु मल्ल जीत सिद्धि अंगना वरूँ।।6।।

ॐ ह्रीं णमोसिद्धाणंश्रीसिद्धपरमेष्ठिभ्यः मोहांधकारविनाशनाय दीपं....।

सुगन्ध धूप लेय अग्नि पात्र में प्रजालिये।
कलंक पंक ज्वाल के निजात्म को उजालिये।।
अनन्त सिद्धचक्र की सदा उपासना करूँ।
स्व जन्म मृत्यु मल्ल जीत सिद्धि अंगना वरूँ।।7।।

ॐ ह्रीं णमोसिद्धाणंश्रीसिद्धपरमेष्ठिभ्यः अष्टकर्मदहनाय धूपं....।

अनार सेव संतरादि सत्फलों को लाइये।
स्व तीन रत्न हेतु नाथ पाद में चढ़ाइये।।

अनन्त सिद्धचक्र की, सदा उपासना करूँ।
स्व जन्म मृत्यु मल्ल जीत, सिद्धि अंगना वरूँ।।8।।

ॐ ह्रीं णमोसिद्धाणंश्रीसिद्धपरमेष्ठिभ्यः मोक्षफलप्राप्तये फलं....।

सुरत्न को मिलाय अर्घ, लेय थाल में भरे।
अनन्त शक्ति हेतु आप, चर्ण अर्चना करे।।
अनन्त सिद्धचक्र की, सदा उपासना करूँ।
स्व जन्म मृत्यु मल्ल जीत, सिद्धि अंगना वरूँ।।9।।

ॐ ह्रीं णमोसिद्धाणंश्रीसिद्धपरमेष्ठिभ्यः अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं.....।

—दोहा—

प्रभु पद में धारा करूँ, चउसँघ शांती हेत।।
शांतीधारा जगत में, आत्यंतिक सुख हेतु।।10।।

शान्तये शांतिधारा।

चंपक हरसिंगार बहु, पुष्प सुगन्धित सार।
पुष्पांजलि से पूजते, होवे सौख्य अपार।।11।।

दिव्य पुष्पांजलिः।

अथ प्रत्येक अर्घ्य

—दोहा—

'सिद्ध' मात्र दो शब्द के उच्चारण से जान।
सर्व कार्य की सिद्धि हो क्रमशः पद निर्वाण।।1।।

इति मंडलस्योपरि द्वितीयदले पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

—रोला छन्द—

मोह कर्म को नाश, समकित शुद्ध लह्यो है।
लोक शिखर अधिवास, शाश्वत काल कियो है॥
जल गंधादिक लेय, पूजूँ अर्घ चढ़ा के।
भव भव भ्रमण विनाश, बसूँ मोक्षपुर जाके।।1।।

ॐ ह्रीं मोहनीयकर्मरहितसम्यक्त्वगुणसहितसिद्धपरमेष्ठिभ्यः अर्घ्यं...।

ज्ञानावरण विघात, ज्ञान अनन्त लिया है।
लोकालोक समस्त, युगपत जान लिया है।।
जल गंधादिक लेय, पूजूँ अर्घ चढ़ा के।
भव भव भ्रमण विनाश, बसूँ मोक्षपुर जाके।।2।।

ॐ ह्रीं ज्ञानावरणकर्मरहितानंतज्ञानगुणसहितसिद्धपरमेष्ठिभ्यः अर्घ्यं...।

दर्शन के आवर्ण, नवविध सर्व विनाशे।
इक क्षण में सब विश्व, देखें निजगुण भासें।।
जल गंधादिक लेय, पूजूँ अर्घ चढ़ा के।
भव भव भ्रमण विनाश, बसूँ मोक्षपुर जाके।।3।।

ॐ ह्रीं दर्शनावरणकर्मरहितानंतदर्शनगुणसहितसिद्धपरमेष्ठिभ्यः अर्घ्यं..।

अंतराय को चूर, शक्ति अनन्ती पायी।
करो विघ्न घन दूर, मैं पूजूँ हरसायी।।
जल गंधादिक लेय, पूजूँ अर्घ चढ़ा के।
भव भव भ्रमण विनाश, बसूँ मोक्षपुर जाके।।4।।

ॐ ह्रीं अंतरायकर्मरहितानंतवीर्यगुणसहितसिद्धपरमेष्ठिभ्यः अर्घ्यं....।

नाम कर्म को नाश, देहादिक से छूटें।
गुण सूक्ष्मत्व विकास, निज आतम सुख लूटें।।
जल गंधादिक लेय, पूजूँ अर्घ चढ़ा के।
भव भव भ्रमण विनाश, बसूँ मोक्षपुर जाके।।5।।

ॐ ह्रीं नामकर्मरहितसूक्ष्मत्वगुणसहितसिद्धपरमेष्ठिभ्यः अर्घ्यं....।

आयू कर्म विनाश, पूर्ण स्वतन्त्र भये हैं।
गुण अवगाहन पाय, जग से मुक्त भये हैं।।
जल गंधादिक लेय, पूजूँ अर्घ चढ़ा के।
भव भव भ्रमण विनाश, बसूँ मोक्षपुर जाके।।6।।

ॐ ह्रीं आयुकर्मरहितावगाहनगुणसहितसिद्धपरमेष्ठिभ्यः अर्घ्यं...।

गोत्र कर्म कर दूर, अगुरुलघूगुण पायो।
गणधर मुनिगण इन्द्र, तुमको शीश नमायो।।
जल गंधादिक लेय, पूजूँ अर्घ चढ़ा के।
भव भव भ्रमण विनाश, बसूँ मोक्षपुर जाके।।7।।

ॐ ह्रीं गोत्रकर्मरहितागुरुलघुगुणसहितसिद्धपरमेष्ठिभ्यः अर्घ्यं...।

किया वेदनी घात, निज में तृप्त हुए हैं।
अव्याबाध अनन्त, सुख में लीन हुए हैं।।
जल गंधादिक लेय, पूजूँ अर्घ चढ़ा के।
भव भव भ्रमण विनाश, बसूँ मोक्षपुर जाके।।8।।

ॐ ह्रीं वेदनीयकर्मरहिताव्याबाधसुखसहितसिद्धपरमेष्ठिभ्यः अर्घ्यं....।

—पूर्णार्घ्य—

अष्टकरम कर चूर, आठ प्रमुख गुण पायो।
अष्टम पृथ्वी शीश, जाकर थिरता पायो।।
भूत भविष्यत काल, वर्तमान के सिद्धा।
पूरण अर्घ चढ़ाय, पूजूँ विश्व प्रसिद्धा।।9।।

ॐ ह्रीं अष्टकर्मरहिताष्टगुणसहितसिद्धपरमेष्ठिभ्यः पूर्णार्घ्यं....।

शान्तये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

जाप्य-**ॐ ह्रीं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुभ्यो नमः।**

जयमाला

—दोहा—

पुद्गल के संबंध से, हीन स्वयं स्वाधीन।
नमूँ नमूँ सब सिद्ध को, तिन पद भक्ति अधीन।।1।।

चाल-हे दीन.....

जय जय अनंत सिद्ध वृंद मुक्ति के कंता।
जय जय अनंत भव्यवृंद सिद्धि करंता।

जय जय त्रिलोक अग्रभाग ऊर्ध्व राजते।
जय नाथ! आप में हि आप नित्य राजते।।1।।

ज्ञानावरण के पाँच भेद को विनाशिया।
नव भेद दर्शनावरण को सर्व नाशिया।।
दो वेदनीय आठ बीस मोहनी हने।
चउ आयु नामकर्म सब तिरानबे हने।।2।।

दो गोत्र अंतराय पाँच सर्व नाशिया।
सब इक सौ अड़तालीस कर्म प्रकृति नाशिया।।
ये आठ कर्मनाश मुख्य आठ गुण लिये।
फिर भी अनंतानंत सुगुणवृंद भर लिये।।3।।

इन ढाई द्वीप मध्य से ही मुक्ति पद मिले।
अन्यत्र तीन लोक में ना पूर्ण सुख खिले।।
सब ही मनुष्य मुक्त होते कर्मभूमि से।
अन्यत्र से भी मुक्त हों उपसर्ग निमित्त से।।4।।

पर्वत नदी समुद्र गुफा कंदराओं से।
वन भोगभूमि कर्मभू और वेदिकाओं से।।
जो मुक्त हुए हो रहे औ होयेंगे आगे।
उन सर्व सिद्ध को नमूँ मैं शीश झुका के।।5।।

नर लोक पैंतालीस लाख योजनों कहा।
उतना प्रमाण सिद्ध लोक का भी है रहा।।
अणुमात्र भी जगह न जहाँ मुक्त ना हुए।
अतएव सिद्धलोक सिद्धगण से भर रहे।।6।।

उत्कृष्ट सवा पांच सौ धनु का प्रमाण है।
जघन्य साढ़े तीन हाथ का ही मान है।।
मध्यम अनेक भेद से अवगाहना कही।
उन सर्व सिद्ध को नमूँ वे सौख्य की मही।।7।।

निज आत्मजन्य निराबाध सौख्य भोगते।
निज ज्ञान से ही लोकालोक को विलोकते।।
निज में सदैव तृप्त सदाकाल रहेंगे।
आगे कभी भी वे न पुनर्जन्म लहेंगे।।8।।

उन सर्व सिद्ध की मैं सदा वंदना करूँ।
सर्वार्थसिद्धि हेतु सदा अर्चना करूँ।।
तुम नाममात्र भी निमित्त सर्व सिद्धि में।
अतएव नमूँ बारबार सर्व सिद्ध मैं।।9।।

—दोहा—

भूत भविष्यत संप्रती, तीन काल के सिद्ध।
उनकी पूजा जो करें लहें 'ज्ञानमति' निद्ध।।10।।

ॐ ह्रीं णमोसिद्धाणं सर्वसिद्धपरमेष्ठिभ्यः जयमाला अर्घ्यं....।

शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

अर्हंत सिद्धाचार्य पाठक, साधु को जो पूजते।
वे मोह को कर दूर मृत्यु, मल्ल को भी चूरते।।
अद्भुत सुखों को भोग क्रम से, मुक्ति लक्ष्मी वश करें।
कैवल्य अर्हत् "ज्ञानमति" पा, पूर्ण सुख शाश्वत भरें।।

।। इत्याशीर्वादः ।।

पूजा नं04

आचार्य पूजा

—स्थापना-गीता छंद—

जो स्वयं पंचाचार पालें, अन्य से पलवावते।
छत्तीस गुण धारें सदा, निज आत्मा को ध्यावते।।
ऐसे परम आचार्यवर, भवसिंधु से भवि तारते।
इस हेतु उनकी अर्चना, हित हम हृदय में धारते।।1।।

ॐ ह्रीं णमो आयरियाणं आचार्यपरमेष्ठिसमूह! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननं।
ॐ ह्रीं णमो आयरियाणं आचार्यपरमेष्ठिसमूह!अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।
ॐ ह्रीं णमो आयरियाणं आचार्यपरमेष्ठिसमूह! अत्र मम सन्निहितो भवभव वषट् सन्निधीकरणं।

अथाष्टकं-भुजंगप्रयात छंद

पयोराशि का नीर निर्मल भराऊँ।
गुरू के चरण तीन धारा कराऊँ।।
जजूँ नित्य आचार्य के पाद को मैं।
तरूँ शीघ्र संसार वाराशि को मैं।।1।।

ॐ ह्रीं णमो आयरियाणं श्री आचार्यपरमेष्ठिभ्यः जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं....।

सुगंधीत चंदन लिये भर कटोरी।
जगत्तापहर चर्चहूँ हाथ जोरी।।
जजूँ नित्य आचार्य के पाद को मैं।
तरूँ शीघ्र संसार वाराशि को मैं।।2।।

ॐ ह्रीं णमो आयरियाणं श्री आचार्यपरमेष्ठिभ्यः संसारतापविनाशनाय चन्दनं...।

धुले श्वेत अक्षत लिये थाल भर के।
धरूँ पुंज तुम पास बहु आश धर के ।।
जजूँ नित्य आचार्य के पाद को मैं।
तरूँ शीघ्र संसार वाराशि को मैं।।3।।

ॐ ह्रीं णमो आयरियाणं श्री आचार्यपरमेष्ठिभ्यः अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं...।

जुही केतकी पुष्प की माल लाऊँ।
सभी व्याधि हर आप चरणों चढ़ाऊँ।।
जजूँ नित्य आचार्य के पाद को मैं।
तरूँ शीघ्र संसार वाराशि को मैं।।4।।

ॐ ह्रीं णमो आयरियाणं श्री आचार्यपरमेष्ठिभ्य: कामबाणक्ष्विंसनाय पुष्पं.....।

सरस मिष्ट पक्वान्न अमृत सदृश ले।
परम तृप्ति हेतू चढ़ाऊँ तुम्हें मैं।।
जजूँ नित्य आचार्य के पाद को मैं।
तरूँ शीघ्र संसार वाराशि को मैं।।5।।

ॐ ह्रीं णमो आयरियाणं श्री आचार्यपरमेष्ठिभ्य: क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं.....।

शिखा दीप की जगमगाती भली है।
जजत ही तुम्हें ज्ञान ज्योति जली है।।
जजूँ नित्य आचार्य के पाद को मैं।
तरूँ शीघ्र संसार वाराशि को मैं।।6।।

ॐ ह्रीं णमो आयरियाणं श्री आचार्यपरमेष्ठिभ्य: मोहान्धकारविनाशनाय दीपं.....।

अगुरु धूप खेते उड़े धूम्र नभ में।
दुरित कर्म जलते गुरु भक्ति वश तें।।
जजूँ नित्य आचार्य के पाद को मैं।
तरूँ शीघ्र संसार वाराशि को मैं।।7।।

ॐ ह्रीं णमो आयरियाणं श्री आचार्यपरमेष्ठिभ्य: अष्टकर्मदहनाय धूपं...।

अनन्नास नींबू बिजौरा लिये हैं।
तुम्हें अर्पते सर्व वांछित लिये हैं।।
जजूँ नित्य आचार्य के पाद को मैं।
तरूँ शीघ्र संसार वाराशि को मैं।।8।।

ॐ ह्रीं णमो आयरियाणं श्री आचार्यपरमेष्ठिभ्य: मोक्षफलप्राप्तये फलं.....।

लिये थाल में अर्घ है भक्ति भारी।
गुरु अर्चना है सदा सौख्यकारी।।

जजूँ नित्य आचार्य के पाद को मैं।
तरूँ शीघ्र संसार वाराशि को मैं।।9।।

ॐ ह्रीं णमो आयरियाणं श्री आचार्यपरमेष्ठिभ्य: अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं...।

—दोहा—

गुरु पद में धारा करुँ, चउसंघ शांती हेत।
शांतीधारा जगत में, आत्यंतिक सुख हेतु।।10।।

शान्तये शांतिधारा।

चंपक हरसिंगार बहु, पुष्प सुगंधित सार।
पुष्पांजलि से पूजते, होवे सौख्य अपार।।11।।

दिव्य पुष्पांजलि:।

—सोरठा—

स्वयं आचारें नित्य, पंचाचार इसीलिये।
कहलावें आचार्य, पर को आचरवावते।।1।।

इति मंडलस्योपरि तृतीय दले पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

—दोहा—

आठ भेद संयुत धरे, ज्ञानाचार महान्।
उन आचार्य प्रधान को, पूजूँ श्रद्धाठान।।1।।

ॐ ह्रीं ज्ञानाचरणगुणसहित आचार्यपरमेष्ठिभ्य: अर्घ्यं....।

आठ अंग युत मोक्ष का, मूल दर्शनाचार।
इस गुणयुत आचार्य को, जजूँ भक्ति उरधार।।2।।

ॐ ह्रीं दर्शनाचारगुणसहिताचार्यपरमेष्ठिभ्य: अर्घ्यं.....।

तेरह भेद समेत है, शुभ चारित्राचार।
इस गुण भूषित सूरि को, प्रणमूँ बारंबार।।3।।

ॐ ह्रीं चारित्राचारगुणसहिताचार्यपरमेष्ठिभ्य: अर्घ्यं....।

नाना विध तप को तपें, आतमशुद्धी हेतु।
तप आचारी सूरि को, पूजूँ भक्ति समेत।।4।।
ॐ ह्रीं तप आचार गुणसहिताचार्यपरमेष्ठिभ्य: अर्घ्यं.....।

पांच भेद संयुत कहा, वीर्याचार विशेष।
इस गुण को जो धारते, पूजूँ उन्हें हमेश।।5।।
ॐ ह्रीं वीर्याचार गुणसहिताचार्यपरमेष्ठिभ्य: अर्घ्यं.....।

— अडिल्ल छंद—

क्रोध निमित्त मिलें, फिर भी समता गहें।
अंतरंग में क्षमा धार, सब कुछ सहें।।
ऐसे गुरु आचार्य, जजूँ मन लायके।
रत्नत्रय निधि लहूं, कृपा तुम पायके।।6।।
ॐ ह्रीं उत्तमक्षमागुणसहिताचार्यपरमेष्ठिभ्य: अर्घ्यं...।

मृदुता गुण को लहें, मान शठ मार के।
भवि जन शरणा गहें, जगत से हार के।।
ऐसे गुरु आचार्य, जजूँ मन लायके।
रत्नत्रय निधि लहूं, कृपा तुम पायके।।7।।
ॐ ह्रीं उत्तममार्दवगुणसहिताचार्यपरमेष्ठिभ्य: अर्घ्यं...।

माया दुर्गतिसखी, त्याग आर्जव गहें।
मन वचतन को सरल करें, शिवसुख लहें।।
ऐसे गुरु आचार्य, जजूँ मन लायके।
रत्नत्रय निधि लहूं, कृपा तुम पायके।।8।।
ॐ ह्रीं उत्तमार्जवगुणसहिताचार्यपरमेष्ठिभ्य: अर्घ्यं....।

अप्रिय कटुक कठोर, असत्य निवारते।
दशविध पालें सत्य, परमसुख पावते।।

ऐसे गुरु आचार्य, जजूँ मन लायके।
रत्नत्रय निधि लहूं, कृपा तुम पायके।।9।।
ॐ ह्रीं उत्तमसत्यगुणसहिताचार्यपरमेष्ठिभ्य: अर्घ्यं....।

लोभ पाप का मूल, दूर से छोड़ते।
परम शौच धर शिव से, नाता जोड़ते।।
ऐसे गुरु आचार्य, जजूँ मन लायके।
रत्नत्रय निधि लहूं, कृपा तुम पायके।।10।।
ॐ ह्रीं उत्तमशौचधर्मसहिताचार्यपरमेष्ठिभ्य: अर्घ्यं....।

जीव दया धर इन्द्रिय, का निग्रह करें।
द्वादशविध संयम धर, वे भवदधि तरें।।
ऐसे गुरु आचार्य, जजूँ मन लायके।
रत्नत्रय निधि लहूं, कृपा तुम पायके।।11।।
ॐ ह्रीं उत्तमसंयमधर्मसहिताचार्यपरमेष्ठिभ्य: अर्घ्यं....।

पर से इच्छा रोकें, उत्तम तप करें।
निज आत्मा को निर्मल, कर शिवतिय वरें।।
ऐसे गुरु आचार्य, जजूँ मन लायके।
रत्नत्रय निधि लहूं, कृपा तुम पायके।।12।।
ॐ ह्रीं उत्तमतपोधर्मसहिताचार्यपरमेष्ठिभ्य: अर्घ्यं....।

उत्तम त्याग करें, रत्नत्रय दान दें।
भव्यों को चउविध दें, दान उबारते।।
ऐसे गुरु आचार्य, जजूँ मन लायके।
रत्नत्रय निधि लहूं, कृपा तुम पायके।।13।।
ॐ ह्रीं उत्तमत्यागधर्मसहिताचार्यपरमेष्ठिभ्य: अर्घ्यं....।

किंचित् भी नहिं मम, यह आकिंचन्य है।
इस गुण से त्रिभुवनपति, होते धन्य हैं।।

ऐसे गुरु आचार्य, जजूँ मन लायके।
रत्नत्रय निधि लहूं, कृपा तुम पायके।।14।।

ॐ ह्रीं उत्तमाकिंचन्यधर्मसहिताचार्यपरमेष्ठिभ्यः अर्घ्यं....।

ब्रह्मरूप निज आतम, में चर्या करें।
त्रिभुवन पूजित ब्रह्मचर्य, गुण को धरें।।
ऐसे गुरु आचार्य, जजूँ मन लायके।
रत्नत्रय निधि लहूं, कृपा तुम पायके।।15।।

ॐ ह्रीं उत्तमब्रह्मचर्यधर्मसहिताचार्यपरमेष्ठिभ्यः अर्घ्यं....।

—नरेंद्र छंद—

चतुराहार त्याग करके मुनि, बहु उपवास करे हैं।
बेलादिक से छह महिना तक, जल भी नहीं ग्रहें हैं।।
अनशन तप से भूषित वे गुरु, कर्मेंधन को दहते।
उनकी भक्ती पूजन करके, अतुल शक्ति हम चहते।।16।।

ॐ ह्रीं अनशनतपोगुणसहिताचार्यपरमेष्ठिभ्यः अर्घ्यं....।

बत्तिस ग्रास पूर्ण भोजन में, एक ग्रास कम करते।
एक ग्रास लें एक सिक्थ[1] लें, जो भी हो कम करते।।
अवमौदर्य करें जो सूरी, सभी प्रमाद नशावें।
उनकी भक्ती पूजन करके, हम आलस्य भगावें।।17।।

ॐ ह्रीं अवमौदर्यतपोगुणसहिताचार्यपरमेष्ठिभ्यः अर्घ्यं....।

चर्या समय वस्तु या घर का, नियम अटपटा करते।
यदि नहिं मिल रहें उपवासी, रंच खेद नहिं करते।।
वृत्तपरीसख्या इस तप को, करके कर्म प्रजालें।
उनकी भक्ती पूजा करके, हम निज ज्योति जगालें।।18।।

ॐ ह्रीं वृत्तपरिसंख्यानतपोगुणसहिताचार्यपरमेष्ठिभ्यः अर्घ्यं....।

दूध दही घी नमक मधुर रस, सब त्यागें या कुछ को।
रसपरित्याग करन से प्रगटें, रस ऋद्धी भी उनको।।

1. चावल

फिर भी निज आतम अनुभव रस,अमृत स्वाद चखे हैं।
उनकी भक्ती पूजा करके, हम निज आत्म लखे हैं।।19।।

ॐ ह्रीं रसपरित्यागतपोगुणसहिताचार्यपरमेष्ठिभ्यः अर्घ्यं....।

आर्त रौद्र दुर्ध्यान छोड़कर, धर्मध्यान करते हैं।
अतः शुद्ध एकांत जगह, स्थान शयन करते हैं।।
इस विविक्त शयनासन तप से, सब विकल्प परिहारें।
उनकी भक्ती पूजा करके, निर्विकल्प पद धारें।।20।।

ॐ ह्रीं विविक्तशयनासनतपोगुणसहिताचार्यपरमेष्ठिभ्यः अर्घ्यं...।

नानाविध से आसन करते, तन में क्लेश बढ़े हैं।
आतापन आदिक तप तपते, निश्चल होय खड़े हैं।।
सुखियापन तज कायक्लेश तप, करके कर्म झड़ावें।
उनकी पूजा भक्ती करके, हम निज शक्ति बढ़ावें।।21।।

ॐ ह्रीं कायक्लेशतपोगुणसहिताचार्यपरमेष्ठिभ्यः अर्घ्यं.....।

अतिक्रम व्यतिक्रम अतीचार, औ अनाचार व्रत में हों।
अंतरंग तप प्रायश्चित से, शोधन सब व्रत के हों।।
गुरु के पास पाप शोधन कर, आतम शुद्ध करे हैं।
उनकी भक्ती पूजा करके, हम सब पाप हरें हैं।।22।।

ॐ ह्रीं प्रायश्चित्ततपोगुणसहिताचार्यपरमेष्ठिभ्यः अर्घ्यं.....।

दर्शन ज्ञान चरित तप का जो, नितप्रति विनय करें हैं।
नित पंचम उपचार विनय से, गुरु में राग धरें हैं।।
मोक्ष महल का द्वार खोलते, वे भविजन सुविधा से।
उनकी भक्ती पूजा करके, निजपद पाऊँ तासे।।23।।

ॐ ह्रीं विनयतपोगुणसहिताचार्यपरमेष्ठिभ्यः अर्घ्यं....।

सूरि पाठक साधू गण की, सेवा आदि करें हैं।
सर्वशक्ति से संयतजन की, वैयावृत्ति करे हैं।।

तीर्थंकर समपुण्य प्रकृति भी, संपादन कर लेते।
उनकी भक्ती पूजा करके, भवजल को जल देते।।24।।
ॐ ह्रीं वैयावृत्तितपोगुणसहिताचार्यपरमेष्ठिभ्य: अर्घ्यं...।

अर्हत् भाषित सूत्र ग्रन्थ का, नित पठनादिक करते।
वाचन पृच्छन अनुप्रेक्षण, आम्नाय देशना करते।।
अंतस्तप स्वाध्याय पंच विध,करें करावें रूचि से।
उनकी भक्ती पूजा करके, ज्ञान बढ़ावें मुद से।।25।।
ॐ ह्रीं स्वाध्यायतपोगुणसहिताचार्यपरमेष्ठिभ्य: अर्घ्यं....।

अंतर बाहर उपाधि त्यागकर, तप व्युत्सर्ग धरे हैं।
आतमलीन सहज वैरागी, मन का मैल हरे हैं।।
इन तपधारी संयत जन को, सुरपति शीश नमावें।
उनकी भक्ती पूजा करके, संयम निधि हम पावें।।26।।
ॐ ह्रीं व्युत्सर्गतपोगुणसहिताचार्यपरमेष्ठिभ्य: अर्घ्यं....।

अशुभ ध्यान तज धर्म ध्यान धर, निज परिणाम संभारें।
शुक्ल ध्यान के हेतु निरंतर, ध्यानाभ्यास विचारें।।
चिच्चैतन्यसुधारस पीकर, अजरामर पद पावें।
उनकी भक्ती पूजा कर हम, सब दुर्ध्यान नशावें।।27।।
ॐ ह्रीं ध्यानतपोगुणसहिताचार्यपरमेष्ठिभ्य: अर्घ्यं....।

—रोला छन्द—

जो इन्द्रिय के अवश, आवश्यक उन किरिया।
षट् भेदों में आदि, समता नामक चर्या।।
रागद्वेष में साम्य, सामायिक त्रय काले।
उनको अर्घ चढ़ाय, मैं पूजूँ त्रय काले।।28।।
ॐ ह्रीं समतावश्यकगुणसहिताचार्यपरमेष्ठिभ्य: अर्घ्यं....।

तीर्थंकर चौबीस, उनकी नामादिक से।
करते स्तवन विनीत, स्तव आवश्यक ये।।
जो मुनि करें सदैव, अतिशय पुण्य कमावें।
उनको अर्घ चढ़ाय, हम भी पाप नशावें।।29।।
ॐ ह्रीं चतुर्विंशतिस्तवावश्यकगुणसहिताचार्यपरमेष्ठिभ्य: अर्घ्यं....।

अर्हत् सिद्ध मुनीश, या उनकी हो प्रतिमा।
किन्हीं एक का नित्य, रुचिधर वंदन करना।।
आवश्यक सुखकार, वंदन नित्य करें जो।
उनको अर्घ चढ़ाय, पाऊँ लोक शिखर को।।30।।
ॐ ह्रीं वंदनावश्यकगुणसहिताचार्यपरमेष्ठिभ्य: अर्घ्यं....।

व्रत में हों जो दोष, प्रतिक्रमण से शोधें।
दैनिक रात्रिक आदि, विधि से मल को धोते।।
भूतकाल के दोष, जो मुनि दूर करे हैं।
उनको अर्घ चढ़ाय, हम निज दोष हरे हैं।।31।।
ॐ ह्रीं प्रतिक्रमणावश्यकगुणसहिताचार्यपरमेष्ठिभ्य: अर्घ्यं..।

भाविदोष कर त्याग, प्रत्याख्यान धरें जो।
कर अहार तत्काल, चतुराहार तजे जो।।
अथवा बहुविध वस्तु, या कुछ त्याग करें हैं।
उनको अर्घ चढ़ाय, हम निज पाप हरें हैं।।32।।
ॐ ह्रीं प्रत्याख्यानावश्यकगुणसहिताचार्यपरमेष्ठिभ्य: अर्घ्यं....।

तन से ममत निवार, कायोत्सर्ग करें जो।
क्षण मुहूर्त या वर्ष, तक भी ध्यान धरें जो।।
वे आचार्य सदैव, भविजन को सुखदाता।
उनको अर्घ चढ़ाय मैं पूजूँ नत माथा।।33।।
ॐ ह्रीं कायोत्सर्गावश्यकगुणसहिताचार्यपरमेष्ठिभ्य: अर्घ्यं....।

—सखी छंद—

त्रयगुप्ती में मनगुप्ती, जो अधिक कठिन से निभती।
मनरोध करें शुभ माहीं, उन पूजूँ अर्घ चढ़ाहीं।।34।।

ॐ ह्रीं मनोगुप्तिगुणसहिताचार्यपरमेष्ठिभ्यः अर्घ्यं....।

बहि अंतर जल्प निवारें,अथवा नहिं अशुभ उचारें।
वचि गुप्ती धर सूरीश्वर, मैं पूजूँ धर्मरुचीधर।।35।।

ॐ ह्रीं वचोगुप्तिगुणसहिताचार्यपरमेष्ठिभ्यः अर्घ्यं....।

तन सुस्थिर ध्यान धरे जो,या अशुभ क्रिया न करें जो।
वे कायगुप्ति ऋषि पाले, उन पूजत हम भव टालें।।36।।

ॐ ह्रीं कायगुप्तिगुणसहिताचार्यपरमेष्ठिभ्यः अर्घ्यं....।

—पूर्णार्घ्य-शंभु छंद—

जो पंचाचार धर्म दशविध, द्वादशविध जप को नित करते।
षट् आवश्यक त्रयगुप्ति सहित,छत्तिस गुण को निज में धरते।।
वे स्वयं तरें तारें पर को, आचार्य परम गुरु माने हैं।
हम उनकी पूजा कर करके, निज आतम को पहिचानें हैं।।37।।

ॐ ह्रीं षट्त्रिंशत्गुणसहिताचार्यपरमेष्ठिभ्यः पूर्णार्घ्यं....।

शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

जाप्य-ॐ ह्रीं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुभ्यो नमः.....।

जयमाला

—दोहा—

भववारिधि में भव्य के, कर्णधार आचार्य।
गाऊँ तुम गुण मालिका, होवो मम आचार्य।।1।।

—स्रग्विणी छंद—

मैं नमूँ मैं नमूँ मैं नमूँ सूरि को।
पाप संताप मेरा सबे दूर हो।।

नाथ तेरे बिना कोई ना आपना।
शीघ्र संसार वाराशि से तारना।।1।।

शिष्य का आप संग्रह करें चाव से।
नित्य उनपे अनुग्रह करें भाव से।।
दोष लख आप निग्रह करें युक्ति से।
दण्ड दे शुद्ध करते निजी शक्ति से।।2।।

मेरुसम धीर गम्भीर हो सिन्धु सम।
सूर्य सम तेजधृत् सौम्य हो चन्द्र सम।।
मातृवत् रक्षते पितृवत् पालते।
धर्म उपदेश दे भव्य अघ टालते।।3।।

कृष्ण नीलादि लेश्या नहीं आप में।
पीत पद्मादि लेश्या रहें पास में।।
देश कुल जाति से शुद्ध हो श्रेष्ठ हो।
चार विध संघ स्वामी सदा इष्ट हो।।4।।

जन्म व्याधी हरण आप ही वैद्य हो।
कष्ट उपसर्ग से आप नहिं भेद्य हो।।
सर्व साधूगणों से सदाराध्य हो।
इन्द्रशत वंद्य भविवृंद आराध्य हो।।5।।

मूलगुण और उत्तर गुणों को धरो।
सर्व परिषह सहो मोक्ष में दृग धरो।।
नग्न मुद्रा यथाजात गुरुवर्य जी।
वस्त्र श्रृंगार विरहित धरमधुर्य जी।।6।।

रत्नत्रय युक्त फिर भी अकिंचन्य हो।
मोहग्रन्थी रहित आप निर्ग्रंथ हो।
हो कृपा सिन्धु आनन्द भंडार हो।
कर्मवन दग्ध करने को अंगार हो।।7।।

ब्रह्मचारी रहो फिर भी तुम पास में।
सर्वदा है तपस्या रमा साथ में।।
ऋद्धियाँ सिद्धियाँ तुम चरण चूमती।
मुक्ति लक्ष्मी सदा पास में घूमती।।8।।

जो तुम्हारे चरण की करें अर्चना।
फेर होवे कभी भी उन्हें जनम ना।।
नाथ! मैं भी करूँ भक्ति इस हेतु से।
हे गुरो! अब छुड़ावो जगत् क्लेश से।।9।।

—घत्ता—

सूरीवर गुणगण,अगणित गुणमणि, जो भविजन शिर पर धरते।
वे दुर्गति परिहर, सुगति रमावर, केवल ज्ञानमती वरते।।10।।

ॐ ह्रीं णमो आयरियाणं आचार्यपरमेष्ठिभ्य: जयमाला अर्घ्यं....।

शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलि:।

—गीता छंद—

अर्हंतसिद्धाचार्य पाठक साधु को जो पूजते।
वे मोह को कर दूर मृत्यु मल्ल को भी चूरते।।
अद्भुत सुखों को भोग क्रम से मुक्ति लक्ष्मी वश करें।
कैवल्य अर्हत "ज्ञानमती" पा पूर्ण सुख शाश्वत भरें।।

पूजा नं0-5

श्री उपाध्याय पूजा

—स्थापना-गीता छंद—

जो अंग ग्यारह पूर्व चौदह, धारते निज बुद्धि में।
पढ़ते पढ़ाते या उन्हें, जो शास्त्र हैं तत्काल में।।
वे गुरू पाठक मोक्षपथ, दर्शक उन्हीं की वंदना।
आह्वानन विधि करके यहाँ पर, मैं करूँ नित अर्चना।।1।।

ॐ ह्रीं णमोउवज्झायाणं श्री उपाध्यायपरमेष्ठिसमूह! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननं।

ॐ ह्रीं णमोउवज्झायाणं श्री उपाध्यायपरमेष्ठिसमूह! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठ: ठ: स्थापनं।

ॐ ह्रीं णमोउवज्झायाणं श्री उपाध्यायपरमेष्ठिसमूह! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणं।

अथाष्टकं-अडिल्ल छंद-

रेवानदि को नीर, कनकझारी भरूँ।
मुनिपद धारा देय, सकल व्याधी हरूँ।।
उपाध्याय गुरुदेव, जजूँ मन लायके।
परमभेद विज्ञान लहूँ, गुण गायके।।1।।

ॐ ह्रीं णमोउवज्झायाणं श्री उपाध्यायपरमेष्ठिभ्य: जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं....।

अष्टगंध सौगंध, घिसाकर ले लिया।
मुनिचरणाम्बुज पूजत, ताप शमन किया।।
उपाध्याय गुरुदेव, जजूँ मन लायके।
परमभेदविज्ञान लहूँ, गुण गायके।।2।।

ॐ ह्रीं णमोउवज्झायाणं श्री उपाध्यायपरमेष्ठिभ्य: संसारतापविनाशनाय चंदनं....।

मुक्ताफल सम अक्षत, धोकर लाइया।
पाठक मुनि के सम्मुख, पुंज चढ़ाइया।।
उपाध्याय गुरुदेव, जजूँ मन लायके।
परमभेदविज्ञान लहूँ, गुण गायके।।3।।

ॐ ह्रीं णमोउवज्झायाणं श्री उपाध्यायपरमेष्ठिभ्य: अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं..।

मौलसिरी मचकुंद, चमेली आदि ले।
मदनजयी ऋषिराज, जजूँ कुसुमादि ले।।
उपाध्याय गुरुदेव, जजूँ मन लायके।
परमभेदविज्ञान लहूँ, गुण गायके।।4।।

ॐ ह्रीं णमोउवज्झायाणं श्री उपाध्यायपरमेष्ठिभ्य: कामवाणविध्वंसनाय पुष्पं....।

बरफी पेड़ा पूरणपोली चरु लिये।
मुनि पद पंकज पूजा कर निज सुख लिये।।
उपाध्याय गुरुदेव, जजूँ मन लायके।
परमभेदविज्ञान लहूँ, गुण गायके।।5।।

ॐ ह्रीं णमोउवज्झायाणं श्री उपाध्यायपरमेष्ठिभ्य: क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं....।

मणि दीपक में घृत भर, दीप जलाइया।
मोह तिमिर को नाश, ज्ञान प्रगटाइया।।
उपाध्याय गुरुदेव, जजूँ मन लायके।
परमभेदविज्ञान लहूँ, गुण गायके।।6।।

ॐ ह्रीं णमोउवज्झायाणं श्री उपाध्यायपरमेष्ठिभ्य: मोहान्धकारविनाशनाय दीपं.....।

कृष्णागरू वरधूप, अग्नि में खेइया।
कर्म अष्ट कर दग्ध, निजातम सेइया।।
उपाध्याय गुरुदेव, जजूँ मन लायके।
परमभेदविज्ञान लहूँ, गुण गायके।।7।।

ॐ ह्रीं णमोउवज्झायाणं श्री उपाध्यायपरमेष्ठिभ्य: अष्टकर्मदहनाय धूपं...।

एला केला काजू किसमिस थाल में।
तुम पद अर्चूं नित्य नमाकर भाल मैं।।
उपाध्याय गुरुदेव, जजूँ मन लायके।
परमभेदविज्ञान लहूँ, गुण गायके।।8।।

ॐ ह्रीं णमोउवज्झायाणं श्री उपाध्यायपरमेष्ठिभ्य: मोक्षफलप्राप्तये फलं..।

अष्ट द्रव्य से अर्घ, बनाकर ले लिया।
क्षायिक समकित हेतु, चरण अर्पण किया।।
उपाध्याय गुरुदेव, जजूँ मन लायके।
परमभेदविज्ञान लहूँ, गुण गायके।।9।।

ॐ ह्रीं णमोउवज्झायाणं श्री उपाध्यायपरमेष्ठिभ्य: अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं.।

—दोहा—

गुरू पद में धारा करूँ, चउसंघ शांती हेत।
शांतीधारा जगत में, आत्यंतिक सुख हेत।।10।।

शान्तये शांतिधारा।

चंपक हर सिंगार बहु, पुष्प सुगन्धित सार।
पुष्पांजलि से पूजते, होवे सौख्य अपार।।11।।

दिव्य पुष्पांजलि:।

अथ प्रत्येक अर्घ

—सोरठा—

स्वानुभूति से आप, निज आतम अनुभव करें।
निश्चय समकित हेतु, मैं तुम पद पूजा करूँ।।1।।

इति मंडलस्योपरिचतुर्थदले पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

—शंभु छंद—

ग्यारह अंगों में प्रथम कहा है, आचारांग साधुओं का।
कैसे आचरण करे कैसे, बैठें इत्यादिक प्रश्नों का।।

तुम यत्नाचार प्रवृत्ति करो, इस विधि मुनिचर्या जो वर्णे।
इस अंगज्ञान युत उपाध्याय को अर्घ चढ़ाऊँ नत चर्णे।।1।।

ॐ ह्रीं आचारांगज्ञानधारकोपाध्यायपरमेष्ठिभ्यः अर्घ्यं...।

व्यवहार धर्म को क्रिया कहे, स्वसमय परसमय निरूपे हैं।
वह अंग सूत्रकृत नाम धरे, उसको जो पढ़े प्ररूपें हैं।।
उन उपाध्याय को नित्य जजूँ, वे भ्रमतम हरने वाले हैं।
शुद्धात्मरूप आतम अनुभव, को प्रगटित करने वाले हैं।।2।।

ॐ ह्रीं सूत्रकृतांगज्ञानधारकोपाध्यायपरमेष्ठिभ्यः अर्घ्यं...।

एक जीव एक चैतन्यरूप, दो रूप ज्ञान दर्शन युत है।
एकेक अधिक स्थानों से, स्थान अंग नित वर्णत है।।
इस अंग ज्ञान को उपदेशें, वे उपाध्याय शिव पथ दाता।
मैं उनको पूजूँ भक्ती से, वे होवें भव दुख से त्राता।।3।।

ॐ ह्रीं स्थानांगज्ञानधारकोपाध्यायपरमेष्ठिभ्यः अर्घ्यं..।

जो द्रव्य क्षेत्र औ काल भाव, इनकी सदृशता कहता है।
वह समवायांग कहा निजका, अज्ञान मोह सब हरता है।।
जो पढ़ें इसे फिर निज आतम, अनुभव अमृत रस पीते हैं।
उन उपाध्याय को नित्य जजूँ, वे कर्म अरी को जीते हैं।।4।।

ॐ ह्रीं समवायांगज्ञानधारकोपाध्यायपरमेष्ठिभ्यः अर्घ्यं...।

है जीव नहीं या इत्यादिक, सो साठ हजार सुप्रश्नों का।
उत्तर देता है वह व्याख्याप्रज्ञप्ति अंग पंचम रहता।।
इस अंगज्ञान को जो धारें, वे उपाध्याय गुरु होते हैं।
मैं पूजूँ अर्घ चढ़ा करके, वे कर्म कालिमा धोते हैं।।5।।

ॐ ह्रीं व्याख्याप्रज्ञप्तिअंगज्ञानधारकोपाध्यायपरमेष्ठिभ्यः अर्घ्यं...।

धर्मोपदेश तीर्थंकर का,जिसमें हैं बहुत कथायें भी।
गणधर देवों के संशय को, जो दूर करें मनभायें भी।।
वह ज्ञातृधर्मकथनांग श्रेष्ठ, उसको जो पढ़ें पढ़ावें भी।
उन गुरु को शीश नमा करके, हम नितप्रति अर्घ चढ़ावें भी।।6।।

ॐ ह्रीं ज्ञातृधर्मकथांगज्ञानधारकोपाध्यायपरमेष्ठिभ्यः अर्घ्यं...।

है उपासकाध्ययनांग कहा, जिसमें दर्शन आदिक प्रतिमा।
वरणी है ग्यारह भेदरूप, वह कहता श्रावक गुण गरिमा।।
इसके ज्ञाता मुनिवर नित ही, श्रावक का धर्म बताते हैं।
उनको हम अर्घ चढ़ा करके, भव भव दुख दूर भगाते हैं।।7।।

ॐ ह्रीं उपासकाध्ययनांगधारकोपाध्यायपरमेष्ठिभ्यः अर्घ्यं...।

एकेक तीर्थंकर के तीरथ में, नानाविध उपसर्गों को।
सहकर करते निर्वाण प्राप्त, दश दश मुनि मैं वंदूँ उनको।।
उन अंतकृती केवलियों का, जो विस्तृत वर्णन करता है।
उस अंगज्ञान धारी गुरु का, अर्चन ही सब दुख हरता है।।8।।

ॐ ह्रीं अंतकृद्दशांगज्ञानधारकोपाध्यायपरमेष्ठिभ्यः अर्घ्यं...।

प्रत्येक तीर्थंकर के तीरथ में, दारुण उपसर्गों को सहकर।
जन्में हैं पांच अनुत्तर में, दश दश मुनि अतिशय पा पाकर।।
वह अनुत्तरोपपादिक दशांग, जिनमें इन सबका वर्णन है।
इस अंगज्ञानधारी ऋषि को, मेरा भी शत शत वंदन है।।9।।

ॐ ह्रीं अनुत्तरोपपादिकदशांगज्ञानधारकोपाध्यायपरमेष्ठिभ्यः अर्घ्यं...।

आक्षेपिणि विक्षेपिणी कथा, संवेदिनि औ निर्वेदिनि का।
जिसमें वर्णन है किया गया, इन चार प्रकार कथाओं का।।
वह अंग प्रश्न व्याकरण नाम, उसका जो नित अभ्यास करें।
उस मुनि को अर्घ चढ़ा करके, हम क्रम से यम का त्रास हरें।।10।।

ॐ ह्रीं प्रश्नव्याकरणांगज्ञानधारकोपाध्यायपरमेष्ठिभ्यः अर्घ्यं...।

जो कर्म प्रकृतियाँ पुण्य पाप,उनका फल कैसे क्या मिलता?
इन सबका वर्णन जिसमें हो, वह अंग विपाक सूत्र रहता।।
इस अंग ज्ञान को जो धारें, वे ग्यारह अंग ज्ञानधर हैं।
उन उपाध्याय को मैं अर्चूं, वे तारण तरण ऋषीश्वर हैं।।11।।

ॐ ह्रीं विपाकसूत्रांगज्ञानधारकोपाध्यायपरमेष्ठिभ्यः अर्घ्यं...।

—कुसुमलता छंद—

चौदह पूर्वों मे पहला है, उत्पादपूर्व जग मान्य महान।
जो उत्पाद और व्यय ध्रुव का, छहों द्रव्य में करे बखान।।
इस पूरव ज्ञानी पाठक को, अर्घ चढ़ाऊँ भक्ति अपार।
स्वात्म सुधारस आस्वादी वे, हमको करें भवोदधि पार।।12।।

ॐ ह्रीं उत्पादपूर्वज्ञानधारकोपाध्यायपरमेष्ठिभ्य: अर्घ्यं...।

जो अग्रायणीय पूरब है, नय दुर्नय का करे विचार।
तत्त्व द्रव्य के परीमाण, का वर्णन करे सकल सुखकार।।
इस पूरव ज्ञानी पाठक को, अर्घ चढ़ाऊँ भक्ति अपार।
स्वात्म सुधारस आस्वादी वे, हमको करें भवोदधि पार।।13।।

ॐ ह्रीं अग्रायणीयपूर्वज्ञानधारकोपाध्यायपरमेष्ठिभ्य: अर्घ्यं...।

आत्मवीर्य परवीर्य आदि का, वर्णन करे बहुत विधसार।
वीर्यानुप्रवाद पूरव सो, श्री सर्वज्ञ कथित सुखकार।।
इस पूरव ज्ञानी पाठक को, अर्घ चढ़ाऊँ भक्ति अपार।
स्वात्म सुधारस आस्वादी वे, हमको करें भवोदधि पार।।14।।

ॐ ह्रीं वीर्यानुप्रवादपूर्वज्ञानधारकोपाध्यायपरमेष्ठिभ्य: अर्घ्यं...।

अस्ति नास्ति इत्यादि सप्त, भंगी का वर्णन करे महान।
सभी वस्तु हैं स्वपर चतुष्टय, से अस्ती नास्ती गुणवान।।
इस पूरव ज्ञानी पाठक को, अर्घ चढ़ाऊँ भक्ति अपार।
स्वात्म सुधारस आस्वादी वे, हमको करें भवोदधि पार।।15।।

ॐ ह्रीं अस्तिनास्तिप्रवादज्ञानधारकोपाध्यायपरमेष्ठिभ्य: अर्घ्यं...।

जीवादिक हैं अनादि अनिधन, द्रव्यार्थिकनय करे बखान।
ज्ञानवाद में सादि सांत भी, पर्यायार्थिक कहे सुजान।।
इस पूरव ज्ञानी पाठक को, अर्घ चढ़ाऊँ भक्ति अपार।
स्वात्म सुधारस आस्वादी वे, हमको करें भवोदधि पार।।16।।

ॐ ह्रीं ज्ञानप्रवादपूर्वज्ञानधारकोपाध्यायपरमेष्ठिभ्य: अर्घ्यं...।

वचनगुप्ति औ द्वादशभाषा, वचन प्रयोग वचन संस्कार।
सत्य प्रवाद पूर्व कहता है, सत्य असत्य वचन परकार।।
इस पूरव ज्ञानी पाठक को, अर्घ चढ़ाऊँ भक्ति अपार।
स्वात्म सुधारस आस्वादी वे, हमको करें भवोदधि पार।।17।।

ॐ ह्रीं सत्यप्रवादपूर्वज्ञानधारकोपाध्यायपरमेष्ठिभ्य: अर्घ्यं...।

जीव विज्ञ विष्णु भोक्ता है, शुद्ध बुद्ध चिद्रूप महान।
कर्मों का कर्त्ता अशुद्ध भी, आत्मवाद नित करे बखान।
इस पूरव ज्ञानी पाठक को, अर्घ चढ़ाऊँ भक्ति अपार।
स्वात्म सुधारस आस्वादी वे, हमको करें भवोदधि पार।।18।।

ॐ ह्रीं आत्मप्रवादपूर्वज्ञानधारकोपाध्यायपरमेष्ठिभ्य: अर्घ्यं...।

कर्मों का संबंध जीव के, साथ अनादि से दुखखान।
बंध उदय सत्ता आदि का, कर्मप्रवाद करे व्याख्यान।।
इस पूरव ज्ञानी पाठक को, अर्घ चढ़ाऊँ भक्ति अपार।
स्वात्म सुधारस आस्वादी वे, हमको करें भवोदधि पार।।19।।

ॐ ह्रीं कर्मप्रवादपूर्वज्ञानधारकोपाध्यायपरमेष्ठिभ्य: अर्घ्यं...।

नियत समय अनियत समयों तक, उपवासादी प्रत्याख्यान।
इनकी विधि आदि को वरणें, प्रत्याखान पूर्व अमलान।।
इस पूरव ज्ञानी पाठक को, अर्घ चढ़ाऊँ भक्ति अपार।
स्वात्म सुधारस आस्वादी वे, हमको करें भवोदधि पार।।20।।

ॐ ह्रीं प्रत्याख्यानपूर्वज्ञानधारकोपाध्यायपरमेष्ठिभ्य: अर्घ्यं...।

रोहिणि आदि विद्याओं, अष्टांग निमित्तों का व्याख्यान।
विद्यानुप्रवाद पूरव में, इसको पढ़े अचल गुणवान।।
इस पूरव ज्ञानी पाठक को, अर्घ चढ़ाऊँ भक्ति अपार।
स्वात्म सुधारस आस्वादी वे, हमको करें भवोदधि पार।।21।।

ॐ ह्रीं विद्यानुवादपूर्वज्ञानधारकोपाध्यायपरमेष्ठिभ्य: अर्घ्यं...।

तीर्थंकर के पंचकल्याणक, पुरुष शलाका चरित प्रधान।
सूर्यादिक गति ग्रह आदिक फल, कहे कल्याणवाद सुखदान।।

इस पूरव ज्ञानी पाठक को, अर्घ चढ़ाऊँ भक्ति अपार।
स्वात्म सुधारस आस्वादी वे, हमको करें भवोदधि पार।।22।।

ॐ ह्रीं कल्याणवादपूर्वज्ञानधारकोपाध्यायपरमेष्ठिभ्य: अर्घ्यं...।

देह चिकित्सा आठ अंग युत, आयुर्वेद व प्राणायाम।
प्राणावाय पूर्व वर्णे नित, तनु रत्नत्रय साधन मान।।
इस पूरव ज्ञानी पाठक को, अर्घ चढ़ाऊँ भक्ति अपार।
स्वात्म सुधारस आस्वादी वे, हमको करें भवोदधि पार।।23।।

ॐ ह्रीं प्राणावायपूर्वज्ञानधारकोपाध्यायपरमेष्ठिभ्य: अर्घ्यं...।

कला बहत्तर नर की चौंसठ, गुण नारी के शिल्पकलादि।
क्रिया विशाल पूर्व वर्णें नित, काव्यों की निर्माण कलादि।।
इस पूरव ज्ञानी पाठक को, अर्घ चढ़ाऊँ भक्ति अपार।
स्वात्म सुधारस आस्वादी वे, हमको करें भवोदधि पार।।24।।

ॐ ह्रीं क्रियाविशालपूर्वज्ञानधारकोपाध्यायपरमेष्ठिभ्य: अर्घ्यं...।

आठ भेद व्यवहार चारविध, बीज मोक्ष गमनादि क्रिया।
लोकविंदुसार कहता है, शिवसुख औ उसकी चर्या।।
इस पूरव ज्ञानी पाठक को, अर्घ चढ़ाऊँ भक्ति अपार।
स्वात्म सुधारस आस्वादी वे, हमको करें भवोदधि पार।।25।।

ॐ ह्रीं लोकविंदुसारपूर्वज्ञानधारकोपाध्यायपरमेष्ठिभ्य: अर्घ्यं...।

— पूर्णार्घ्य-शंभु छंद—

इन ग्यारह अंग पूर्व चौदह, को पढ़ें पढ़ावें शिष्यों कों।
या द्वादशांग को भी जाने या, सब तात्कालिक शास्त्रों को।।
वे उपाध्याय गुरु पथ दर्शक, उनकी भक्ती जो करते हैं।
वे स्वात्मसुधारस पीकर के, जिन परमानंद सुख भरते हैं।।26।।

ॐ ह्रीं पंचविंशतिगुणसहितोपाध्यायपरमेष्ठिभ्य: पूर्णार्घ्यं....।

शान्तये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलि:।

जाप्य-ॐ ह्रीं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुभ्यो नम:....।

जयमाला

—दोहा—

आगम नेत्र तृतीय है, जिस साधू के पास।
वे शिव पथ परकाशते, नमूँ नमूँ सुखराशि।।

— रोला छंद—

जय जय श्री गुरुदेव, उपाध्याय पदधारी।
जय जय तुम पदसेव, करते भवि नर नारी।।
जय जय मुनिगण वंद्य, धर्मामृत बरसाते।
जय जय तुम मुनिचंद्र, भव्य कुमुद विकसाते।।1।।

इंद्रफणीन्द्र नरेंद्र, तुम पद भक्ति करे हैं।
सुर किन्नर गंधर्व, तुम गुणगान करे हैं।।
तुम दर्शन से भव्य, सम्यग्दर्श लहे हैं।
पद पंकज आराध्य, सम्यग्ज्ञान लहे हैं।।2।।

मैं हूँ चिच्चैतन्य, परमानंद स्वरूपी।
शुद्ध बुद्ध अविरुद्ध, अमल अकल चिद्रूपी।।
दर्श ज्ञान सुख वीर्य, सहज अनंत हमारे।
गुण अनंत चित्पिंड चिन्मय ज्योति संभारे।।3।।

रूप गंध रस फास, पुद्गल के गुण जानों।
पुद्गलनिर्मित देह, उसमें ही ये मानों।।
इंद्रिय मन औ वाक्, पुद्गल रूप कहे हैं।
निज आतम से भिन्न, सम्यग्ज्ञान लहे हैं।।4।।

पुण्य पाप द्वय कर्म, पुद्गल की रचना है।
इनमें हर्ष विषाद, कर भव दुख भरना है।।
निश्चय नय से शुद्ध, ज्ञान स्वरूपी आत्मा।
परमाल्हाद अखंड सौख्य सहित परमात्मा।।5।।

फिर भी यह व्यवहार, नय से कर्म सहित है।
चतुर्गती में नित्य, भ्रमता भ्रांति सहित है।।
अब निज को निज जान,पर को पर श्रद्धाने।
तब चरित्र को धार, सर्व कर्म मल हाने।।6।।

गुरु प्रसाद से आज, सम्यक् रत्न मिला है।
निज पर को प्रतिभास, सम्यग्ज्ञान खिला है।।
सम्यक् चारितपूर्ण, धारण शक्ति नहीं है।
जितना कुछ मुझ पास, उसमें दोष सही है।।7।।

करो कृपा गुरुदेव, शक्ती ऐसी पाऊँ।
पूर्ण चरित्र विकास, करके कर्म नशाऊँ।।
निज को निज के हेतु, निज में ही पा जाऊँ।
"ज्ञानमती" कर पूर्ण, फेर न भव में आऊँ।।8।।

—दोहा—

ज्ञान ध्यान तप में मगन, धारें गुण पच्चीस।
उपाध्याय गुरुवर्य को, नमू नमूँ नत शीश।।9।।

ॐ ह्रीं णमो उवज्झायाणं उपाध्यायपरमेष्ठिभ्यः जयमाला अर्घ्यं....।

शान्तये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

—गीता छंद—

अर्हंत सिद्धाचार्य पाठक साधु को जो पूजते।
वे मोह को कर दूर मृत्यु मल्ल को भी चूरते।।
अद्भुत सुखों को भोग क्रम से मुक्ति लक्ष्मी वश करें।
कैवल्य अर्हत ज्ञानमति पा पूर्ण सुख शाश्वत भरें।।

।। इत्याशीर्वादः ।।

पूजा नं0-6

सर्वसाधु पूजा

—स्थापना-गीताछंद—

जो नित्य मुक्तीमार्ग रत्नत्रय स्वयं साधें सही।
वे साधु संसाराब्धि तर पाते स्वयं ही शिव मही।।
वहं पे सदा स्वात्मैक परमानंद सुख को भोगते।
उनकी करें हम अर्चना, वे भक्त मन मल धोवते।।1।।

ॐ ह्रीं णमो लोए सव्वसाहूणं सर्वसाधुपरमेष्ठिसमूह! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननं।

ॐ ह्रीं णमो लोए सव्वसाहूणं सर्वसाधुपरमेष्ठिसमूह! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।

ॐ ह्रीं णमो लोए सव्वसाहूणं सर्वसाधुपरमेष्ठिसमूह! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणं।

अथाष्टकं-नाराच छंद

साधु चित्त के समान स्वच्छ नीर लाइये।
साधु चर्ण धार देय पाप पंक क्षालिये।।
प्राकृतीक निर्विकार नग्नरूप को धरें।
मुक्तिवल्लभा तथापि शीघ्र आपको वरें।।1।।

ॐ ह्रीं णमो लोए सव्वसाहूणं सर्वसाधुपरमेष्ठिभ्यः जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

स्वर्ण कांति के समान पीत गंध लाइये।
साधु चर्ण चर्चते समस्त ताप नाशिये।।
प्राकृतीक निर्विकार नग्नरूप को धरें।
मुक्तिवल्लभा तथापि शीघ्र आपको वरें।।2।।

ॐ ह्रीं णमो लोए सव्वसाहूणं सर्वसाधुपरमेष्ठिभ्यः संसारतापविनाशनाय चन्दनं....।

चंद रश्मि के समान धौत शालि लाइये।
चर्ण के समीप पुंज देत सौख्य पाइये।।
प्राकृतीक निर्विकार नग्नरूप को धरें।
मुक्तिवल्लभा तथापि शीघ्र आपको वरें।।3।।

ॐ ह्रीं णमो लोए सव्वसाहूणं सर्वसाधुपरमेष्ठिभ्य: अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं.....।

कल्पवृक्ष के सुगंधि पुष्प थाल में भरे।
कामदेव के जयी जिनेंद-पाद में धरें।।
प्राकृतीक निर्विकार नग्नरूप को धरें।
मुक्तिवल्लभा तथापि शीघ्र आपको वरें।।4।।

ॐ ह्रीं णमो लोए सव्वसाहूणं सर्वसाधुपरमेष्ठिभ्य: कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं.....।

पूरिका इमर्तियाँ सुवर्ण थाल में भरे।
भूख व्याधि नाश हेतु आप अर्चना करें।।
प्राकृतीक निर्विकार नग्नरूप को धरें।
मुक्तिवल्लभा तथापि शीघ्र आपको वरें।।5।।

ॐ ह्रीं णमो लोए सव्वसाहूणं सर्वसाधुपरमेष्ठिभ्य: क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं.....।

रत्नदीप में कपूर ज्योति को जलाइये।
साधुवृंद पूजते सुज्ञान ज्योति पाइये।।
प्राकृतीक निर्विकार नग्नरूप को धरें।
मुक्तिवल्लभा तथापि शीघ्र आपको वरें।।6।।

ॐ ह्रीं णमो लोए सव्वसाहूणं सर्वसाधुपरमेष्ठिभ्य: मोहान्धकारविनाशनाय दीपं.....।

अष्ट गंध अति सुगंध धूप खेय अग्नि में।
अष्ट कर्म भस्म होत आप भक्ति रंग में।।

प्राकृतीक निर्विकार नग्नरूप को धरें।
मुक्तिवल्लभा तथापि शीघ्र आपको वरें।।7।।

ॐ ह्रीं णमो लोए सव्वसाहूणं सर्वसाधुपरमेष्ठिभ्य: अष्टकर्मदहनाय धूपं.....।

सेव आम संतरा बदाम थाल में भरे।
पूजते हि आप चर्ण मुक्ति अंगना वरे।।
प्राकृतीक निर्विकार नग्नरूप को धरें।
मुक्तिवल्लभा तथापि शीघ्र आपको वरें।।8।।

ॐ ह्रीं णमो लोए सव्वसाहूणं सर्वसाधुपरमेष्ठिभ्य: मोक्षफलप्राप्तये फलं.....।

नीर गंध आदि अष्ट द्रव्य अर्घ ले लिया।
सुख अनंत हेतु, आप चर्ण में समर्पिया।।
प्राकृतीक निर्विकार नग्नरूप को धरें।
मुक्तिवल्लभा तथापि शीघ्र आपको वरें।।9।।

ॐ ह्रीं णमो लोए सव्वसाहूणं सर्वसाधुपरमेष्ठिभ्य: अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं.....।

—दोहा—

गुरु पद में धारा करूँ, चउ संघ शांती हेत।
शांतीधारा जगत में, आत्यंतिक सुख हेत।।

शान्तये शांतिधारा।।

चंपक हरसिंगार बहु, पुष्प सुगन्धित सार।
पुष्पांजलि से पूजते, होवे सौख्य अपार।।

दिव्य पुष्पांजलि:।।

अथ प्रत्येक अर्घ्य

—सोरठा—

द्विविध मोक्षपथ मूल, अट्ठाइस हैं मूलगुण।
नित्य रहे हैं साध, अत: साधु कहलावते।।

इति मंडलस्योपरिपंचमदले पुष्पांजलिं क्षिपेत।

—नरेंद्र छंद—

जीव समास योनि आदि को,जान जीव वध टालें।
परम अहिंसा महाव्रती वे, स्वपर दया नित पालें।।
निश्चय और व्यवहार रत्नत्रय, का नित साधन करते।
ऐसे गुरु को अर्घ चढ़ाकर, हम आराधन करते।।1।।

ॐ ह्रीं अहिंसामहाव्रतसहितसाधुपरमेष्ठिभ्य: अर्घ्यं...।

रागादिक से असत न बोलें, सदा सत्य वचन बोलें।
अन्य तापकर सत्य वचन भी, कभी न मुख से बोले।।
निश्चय और व्यवहार रत्नत्रय, का नित साधन करते।
ऐसे गुरु को अर्घ चढ़ाकर, हम आराधन करते।।2।।

ॐ ह्रीं सत्य महाव्रतसहितसाधुपरमेष्ठिभ्य: अर्घ्यं...।

पर की वस्तु शिष्य या पर के,बिना दिये नहिं लेवें।
मुनि पद योग्य वस्तु यत्किंचित्, दी जाने पर लेवें।।
निश्चय और व्यवहार रत्नत्रय, का नित साधन करते।
ऐसे गुरु को अर्घ चढ़ाकर, हम आराधन करते।।3।।

ॐ ह्रीं अचौर्य महाव्रतसहितसाधुपरमेष्ठिभ्य: अर्घ्यं...।

सब स्त्री को माता पुत्री, भगिनी सम अवलोकें।
त्रिभुवन पूजित ब्रह्मचर्यव्रत, धारें निज अवलोकें।।
निश्चय और व्यवहार रत्नत्रय, का नित साधन करते।
ऐसे गुरु को अर्घ चढ़ाकर, हम आराधन करते।।4।।

ॐ ह्रीं ब्रह्मचर्यमहाव्रतसहितसाधुपरमेष्ठिभ्य: अर्घ्यं...।

जीवाश्रित या अजीव आश्रित, परिग्रह सर्व निवारे।
पिच्छी आदिक त्याग सके नहिं, उनमें ममत न धारें।।
निश्चय और व्यवहार रत्नत्रय, का नित साधन करते।
ऐसे गुरु को अर्घ चढ़ाकर, हम आराधन करते।।5।।

ॐ ह्रीं अपरिग्रहमहाव्रतसहितसाधुपरमेष्ठिभ्य: अर्घ्यं...।

दिन में प्रासुकपथ से चउकर, देख कार्यवश चलते।
जीव दया पालें वे मुनिवर, ईर्या समिती धरते।।
निश्चय और व्यवहार रत्नत्रय, का नित साधन करते।
ऐसे गुरु को अर्घ चढ़ाकर, हम आराधन करते।।6।।

ॐ ह्रीं ईर्यासमितिसहितसाधुपरमेष्ठिभ्य: अर्घ्यं...।

कर्कश हास्य पिशुन पर निंदा,विकथादिक को टालें।
स्वपर हितंकर मित्र वच बोलें, भाषा समिती पालें।।
निश्चय और व्यवहार रत्नत्रय, का नित साधन करते।
ऐसे गुरु को अर्घ चढ़ाकर, हम आराधन करते।।7।।

ॐ ह्रीं भाषासमितिसहितसाधुपरमेष्ठिभ्य: अर्घ्यं...।

नवकोटि से शुद्ध अशन ले, छ्यालिस दोष निवारें।
शीत उष्ण में समभावी हों, एषणसमिति धारें।।
निश्चय और व्यवहार रत्नत्रय, का नित साधन करते।
ऐसे गुरु को अर्घ चढ़ाकर, हम आराधन करते।।8।।

ॐ ह्रीं एषणासमितिसहितसाधुपरमेष्ठिभ्य: अर्घ्यं...।

पिच्छि कमंडलु शास्त्र उपकरण, संस्तर आदि उपाधि हैं।
देख शोधकर लेते धरते, चौथी समिति सहित हैं।।
निश्चय और व्यवहार रत्नत्रय, का नित साधन करते।
ऐसे गुरु को अर्घ चढ़ाकर, हम आराधन करते।।9।।

ॐ ह्रीं आदाननिक्षेपणसमितिसहितसाधुपरमेष्ठिभ्य: अर्घ्यं...।

जीवरहित एकांत भूमि में, मल मूत्रादिक तजते।
वे उत्सर्ग समिति धारी मुनि, निष्प्रमाद नित वरतें।।
निश्चय और व्यवहार रत्नत्रय, का नित साधन करते।
ऐसे गुरु को अर्घ चढ़ाकर, हम आराधन करते।।10।।

ॐ ह्रीं उत्सर्गसमितिसहितसाधुपरमेष्ठिभ्य: अर्घ्यं...।

मृदु कठोर आदिक स्पर्श जो, सुखकर या दुखकर हैं।
उनमें राग द्वेष नहिं करते, स्पर्शेंद्रिय वशकर है।।

निश्चय और व्यवहार रत्नत्रय, का नित साधन करते।
ऐसे गुरु को अर्घ चढ़ाकर, हम आराधन करते।।11।।

ॐ ह्रीं स्पर्शनेंद्रिय निरोधव्रतसहितसाधुपरमेष्ठिभ्य: अर्घ्यं...।

सरस रुक्ष या प्रिय अप्रियकर, दिये गये भोजन में।
आसक्ती निंदा नहिं करते, रसनेंद्रिय जय उनमें।।
निश्चय और व्यवहार रत्नत्रय, का नित साधन करते।
ऐसे गुरु को अर्घ चढ़ाकर, हम आराधन करते।।12।।

ॐ ह्रीं रसनेंद्रिय निरोधव्रतसहितसाधुपरमेष्ठिभ्य: अर्घ्यं...।

अति सुगंध या दुर्गंधित में, प्रीति अप्रीति न धारें।
घ्राणेन्द्रिय का जय करके मुनि, स्वात्म कीर्ति विस्तारें।।
निश्चय और व्यवहार रत्नत्रय, का नित साधन करते।
ऐसे गुरु को अर्घ चढ़ाकर, हम आराधन करते।।13।।

ॐ ह्रीं घ्राणेंद्रिय निरोधव्रतसहितसाधुपरमेष्ठिभ्य: अर्घ्यं...।

नानाविध के रूप मनोहर, या अमनोहर होते।
उनमें राग द्वेष नहीं कर, मुनि चक्षू कर होते।।
निश्चय और व्यवहार रत्नत्रय, का नित साधन करते।
ऐसे गुरु को अर्घ चढ़ाकर, हम आराधन करते।।14।।

ॐ ह्रीं चक्षु निरोधव्रतसहितसाधुपरमेष्ठिभ्य: अर्घ्यं...।

चेतन और अचेतन के जो, शब्द मधुर या कटु हों।
हर्ष विषाद न किंचित् मन में, श्रोत्रजयी मुनि सच वो।।
निश्चय और व्यवहार रत्नत्रय, का नित साधन करते।
ऐसे गुरु को अर्घ चढ़ाकर, हम आराधन करते।।15।।

ॐ ह्रीं श्रोत्र निरोधव्रतसहितसाधुपरमेष्ठिभ्य: अर्घ्यं...।

—कुसुमलता छन्द—

षट् आवश्यक में समता है,सुख दु:खादिक में समभाव।
तीन काल सामायिक विधिवत्,कर मुनि शमन करें दुखदाव।।

परम अतींद्रिय सुख के इच्छुक,नितप्रति-स्वात्मतत्व का ध्यान।
उन मुनिवर को अर्घ चढ़ाकर, पाऊँ स्वपर भेदविज्ञान।।16।।

ॐ ह्रीं समतावश्यकसहितसाधुपरमेष्ठिभ्य: अर्घ्यं...।

चौबिस तीर्थंकरों का स्तवन, विधिवत् नित्य करें धर चाव।
धर्म ध्यान और शुक्ल ध्यान धर, हरते सर्व दुष्ट दुर्भाव।।
परम अतींद्रिय सुख के इच्छुक,नितप्रति-स्वात्मतत्व का ध्यान।
उन मुनिवर को अर्घ चढ़ाकर, पाऊँ स्वपर भेदविज्ञान।।17।।

ॐ ह्रीं चतुर्विंशतिस्तव आवश्यकसहितसाधुपरमेष्ठिभ्य: अर्घ्यं...।

एक तीर्थंकर या मुनिवर की, करें वंदना भक्ति बढ़ाय।
कृतीकर्म विधिवत् कर करके, उनके शुद्धभाव अधिकाय।।
परम अतींद्रिय सुख के इच्छुक,नितप्रति-स्वात्मतत्व का ध्यान।
उन मुनिवर को अर्घ चढ़ाकर, पाऊँ स्वपर भेदविज्ञान।।18।।

ॐ ह्रीं वंदनावश्यकसहितसाधुपरमेष्ठिभ्य: अर्घ्यं...।

व्रत में दोष हुए प्रमाद से, उनको जो मुनि क्षालन हेत।
मेरा दुष्कृत मिथ्या होवे, ऐसा कह प्रतिक्रमण करेत।।
परम अतींद्रिय सुख के इच्छुक,नितप्रति-स्वात्मतत्व का ध्यान।
उन मुनिवर को अर्घ चढ़ाकर, पाऊँ स्वपर भेदविज्ञान।।19।।

ॐ ह्रीं प्रतिक्रमणावश्यकसहितसाधुपरमेष्ठिभ्य: अर्घ्यं...।

भावी काल दोष को त्यागें, तथा तपस्या हेतु सदैव।
आहारादि त्याग कर देते, प्रत्याख्यान करें गुरुदेव।।
परम अतींद्रिय सुख के इच्छुक,नितप्रति-स्वात्मतत्व का ध्यान।
उन मुनिवर को अर्घ चढ़ाकर, पाऊँ स्वपर भेदविज्ञान।।20।।

ॐ ह्रीं प्रत्याख्यानावश्यकसहितसाधुपरमेष्ठिभ्य: अर्घ्यं...।

दैवसिकादि क्रियाओं में जो, शास्त्र कथित उच्छ्वास समेत।
कायोत्सर्गविधि करते हैं, वे मुनि हरें सकल भव खेद।।

परम अतींद्रिय सुख के इच्छुक,नितप्रति-स्वात्मतत्व का ध्यान।
उन मुनिवर को अर्घ चढ़ाकर, पाऊँ स्वपर भेदविज्ञान।।21।।
ॐ ह्रीं कायोत्सर्गावश्यकसहितसाधुपरमेष्ठिभ्य: अर्घ्यं...।

दो या तीन मास या चउ में, कर उपवास करें कचलोच।
उत्तम मध्यम जघन रीति यह, केश उखाड़े नहिं मन शोच।।
परम अतींद्रिय सुख के इच्छुक,नितप्रति-स्वात्मतत्व का ध्यान।
उन मुनिवर को अर्घ चढ़ाकर, पाऊँ स्वपर भेदविज्ञान।।22।।
ॐ ह्रीं केशलोचगुणसहितसाधुपरमेष्ठिभ्य: अर्घ्यं...।

वस्त्राभूषण अलंकार सब, तजकर धरें दिगंबर वेष।
यथाजात बालकवत् रहते, निर्विकार मन लेश न क्लेश।।
परम अतींद्रिय सुख के इच्छुक,नितप्रति-स्वात्मतत्व का ध्यान।
उन मुनिवर को अर्घ चढ़ाकर, पाऊँ स्वपर भेदविज्ञान।।23।।
ॐ ह्रीं आचेलक्यगुणसहितसाधुपरमेष्ठिभ्य: अर्घ्यं...।

नहिं स्नान करें मुनि कबहूँ, स्वेदधूलि मन लिप्त शरीर।
संयम औ वैराग्य हेतु ही, परमघोर गुण धरें सुधीर।।
परम अतींद्रिय सुख के इच्छुक,नितप्रति-स्वात्मतत्व का ध्यान।
उन मुनिवर को अर्घ चढ़ाकर, पाऊँ स्वपर भेदविज्ञान।।24।।
ॐ ह्रीं अस्नानगुणसहितसाधुपरमेष्ठिभ्य: अर्घ्यं...।

भूमि शिला पाटे या तृण पर, शयन करें भूशयन व्रतीश।
गृही योग्य मृदु कोमल शय्या, तजकर होते स्वात्मरतीश।।
परम अतींद्रिय सुख के इच्छुक,नितप्रति-स्वात्मतत्व का ध्यान।
उन मुनिवर को अर्घ चढ़ाकर, पाऊँ स्वपर भेदविज्ञान।।25।।
ॐ ह्रीं क्षितिशयनगुणसहितसाधुपरमेष्ठिभ्य: अर्घ्यं...।

मंजन आदिक से दाँतों का, घर्षण नहिं करते गतराग।
वे अदंतधावनव्रतधारी, उनका आत्म गुणों में राग।।

परम अतींद्रिय सुख के इच्छुक, नितप्रति-स्वात्मतत्व का ध्यान।
उन मुनिवर को अर्घ चढ़ाकर, पाऊँ स्वपर भेदविज्ञान।।26।।
ॐ ह्रीं अदंतधावनगुणसहितसाधुपरमेष्ठिभ्य: अर्घ्यं...।

तीन भूमि का कर अवलोकन,भित्ति आदि का नहिं आधार।
अंजलि पुट में मिले अशन का, खड़े-खड़े करते आहार।।
परम अतींद्रिय सुख के इच्छुक,नितप्रति-स्वात्मतत्व का ध्यान।
उन मुनिवर को अर्घ चढ़ाकर, पाऊँ स्वपर भेदविज्ञान।।27।।
ॐ ह्रीं स्थितिभोजनगुणसहितसाधुपरमेष्ठिभ्य: अर्घ्यं...।

सूर्य उदय औ अस्तकाल का, त्रय-त्रय घड़ी रहित मधिकाल।
दिन में एक बार भोजन लें, एक भक्तधारी गुण माल।।
परम अतींद्रिय सुख के इच्छुक,नितप्रति-स्वात्मतत्व का ध्यान।
उन मुनिवर को अर्घ चढ़ाकर, पाऊँ स्वपर भेदविज्ञान।।28।।
ॐ ह्रीं भक्तगुणसहितसाधुपरमेष्ठिभ्य: अर्घ्यं...।

पूर्णार्घ्य-शंभु छंद

व्रत समिति इन्द्रियवश आवश्यक पंच-पंच पण षट् मानों।
कचलोच अचेलक अस्नानं, क्षितिशयन अदंत धावन जानों।।
स्थिति भोजन एक भक्त ये सब, अट्ठाइस गुण जो मूल कहें।
इन संयुत सब साधूगण को, हम पूजे भवदधि कूल लहें।।29।।
ॐ ह्रीं अष्टाविंशतिगुणसहितसाधुपरमेष्ठिभ्य: पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शान्तये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलि:।

जाप्य-ॐ ह्रीं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुभ्यो नम:।

जयमाला

—दोहा—

चिच्चैतन्य सुकल्पतरु, आश्रय ले सुखकार।
शिवफल की वाञ्छा करें, नमूँ साधु गुणधार।।

चाल-हे दीनबंधु.....

जैवंत साधुवृंद सकल द्वंद्व निवारें।
जैवंत सुखानन्द स्वात्म तत्त्व विचारें।।
जै जै मुनीन्द्र नग्नरूप धार रहे हैं।
जै जै अनंत सौख्य के आधार भये हैं।।1।।

गुरुदेव अट्ठाईस मूलगुण को धारते।
उत्तर गुणों को भक्ति के अनुसार धारते।।
श्रुत का अभ्यास द्वादशांग तक भी कर रहें।
निज रूप से ही मोक्षपद साकार कर रहें।।2।।

ग्रीष्म ऋतु में पर्वतों पे ध्यान धरे हैं।
वर्षा ऋतु में वृक्षमूल में ही खड़े हैं।।
ठण्डी ऋतु में चौहटे पे या नदी तटे।
निज आत्मा को ध्यावते शिवपथ से नहिं हटे।।3।।

बहु तप के भेद सिंह निष्क्रीडितादि हैं।
उनको सदा करें न तन से ममत आदि हैं।।
तप ऋद्धि बुद्धि ऋद्धि क्रिया विक्रिया ऋद्धी।
रस ऋद्धि और अक्षीणऋद्धि औषधी ऋद्धी।।4।।

नाना प्रकार ऋद्धियों के नाथ हुए हैं।
सिद्धी रमा से भी वे ही सनाथ हुए हैं।।
इनके दरश से भव्य जीव पाप को हरें।
आहार दे नवनिधि समृद्धि पुण्य को भरें।।5।।

इनकी सदैव भक्ति से, जो वंदना करें।
वे मोहकर्म की स्वयं ही खंडना करें।।
मिथ्यात्व औ विषय कषाय दूर से टरें।
स्वयमेव भक्त निजानंद पूर से भरें।।6।।

गुणथान छठे सातवें से चौदहें तक भी।
संयत मुनी ऋषि साधु कहाते हैं सभी भी।।
वे तीनन्यून नव करोड़ संख्य कहे हैं।
बस ढाई द्वीप में अधिक इतने ही रहे हैं।।7।।

इन सर्व साधुओं की नित्य अर्चना करूँ।
त्रयकाल के भी साधुओं की वंदना करुँ।।
गुरुदेव! बार बार मैं ये प्रार्थना करूँ।
निजके ही तीन रत्न की बस याचना करूँ।।8।।

—दोहा—

नाम लेत ही अघ टले, सर्वसाधु का सत्य।
केवल ज्ञानमती मिले, जो अनंतगुण तथ्य।।9।।

ॐ ह्रीं णमोलोए सव्वसाहूणं सर्वसाधुपरमेष्ठिभ्यः जयमाला अर्घ्यं....।
शान्तये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

—गीता छंद—

अर्हंत सिद्धाचार्य पाठक साधु को जो पूजते।
वे मोह को कर दूर मृत्यु मल्ल को भी चूरते।।
अद्भुत सुखों को भोग क्रम से मुक्ति लक्ष्मी वश करें।
कैवल्य अर्हत ज्ञानमति पा पूर्ण सुख शाश्वत भरें।।1।।

।। इत्याशीर्वादः ।।

समुच्चय जयमाला

दोहा- चिन्मय चिंतामणि सकल, चिंतित फल दातार।
तुम गुणकण भी गाय के, पाऊँ सौख्य अपार।।1।।

शंभु छंद

जय जय जिन मोह अरी हन के, अरिहंत नाम तुमने पाया।
जय जय शतइंद्रों से पूजित, अर्हत का यश सबने गाया।।
प्रभु गर्भागम के छह महिने, पहले ही सुरपति आज्ञा से।
धनपति ने रत्नमयी पृथ्वी, कर दी रत्नों की धारा से।।2।।
श्री ह्री धृति आदिक देवीगण, माता की सेवा खूब करें।
माता की गर्भ शुद्धि करके, निज का नियोग सब पूर्ण करें।।
तीर्थंकर माँ पिछली रात्री, में सोलह स्वप्नों को देखें।
प्रातः प्राभातिक विधि करके, आकर पति से उन फल पूछें।।3।।
त्रिभुवनपति जननी तुम होंगी,पति के मुख से फल सुन करके।
रोमांचित हो जाती माता, अतिशय सुख का अनुभव करके।।
जब प्रभु तुम गर्भ बसे आके, इंद्रों ने उत्सव खूब किया।
पन्द्रह महीनों तक रत्नवृष्टि, करके सब दारिद दूर किया।।4।।
जब जन्म लिया तीर्थेश्वर ने, त्रिभुवन जन में आनंद हुआ।
इंद्रों द्वारा मंदरगिरि पर, प्रभु का अभिषेक प्रबंध हुआ।।
जब प्रभु के मन वैराग्य हुआ, लौकांतिक सुरगण भी आये।
प्रभु की स्तवन विधी करके, श्रद्धा भक्तीवश हरषाये।।5।।
दीक्षा कल्याणक उत्सव कर, इंद्रों ने अनुपम पुण्य लिया।
जब केवलज्ञान हुआ प्रभु को, जन जन ने निज को धन्य किया।।
अनुपम वैभवयुत समवसरण, द्वादश कोठे में भवि बैठें।
अरिहंत अनंतचतुष्टय युत, सब जन को हितकर उपदेशें।।6।।
इन पंच कल्याणक के स्वामी, तीर्थंकरगण ही होते हैं।
कुछ दो या तीन कल्याणक पा, निज पर का कल्मष धोते हैं।।

बहुतेक भविक निज तप बल से, चउ घाति कर्म का घात करें।
ये सब अरिहंत कहाते हैं, जो केवल ज्ञान विकास करें।।7।।
जिन अष्टकर्म को नष्ट किया, लोकाग्र विराजें जा करके।
वे सिद्ध हुए कृतकृत्य हुए,निज शाश्वत सुख को पा करके।।
आचार्य परमगुरु चतुःसंघ, अधिनायक गणधर कहलाते।
जो पढ़े पढ़ावें जिनवाणी, वे उपाध्याय निज पद पाते।।8।।
जो करें साधना निज की नित, वे साधु परम गुरु माने हैं।
ये पंच परमगुरु भक्तों के, अगणित दुःखों को हाने हैं।।
ये पांचों ही मंगलकारी, लोकोत्तम शरणभूत माने।
इनकी शरणागत आकरके, निज कर्म कुलाचल को हाने।।9।।
इनकों अर्चूं पूजूँ वंदूँ, औ नमस्कार भी नित्य करूँ।
निज हृदय कमल में धारण कर, सम्पूर्ण अमंगल विघ्न हरूँ।।
दुःखों का क्षय कर्मों का क्षय, होवे मम बोधि लाभ होवे।
मुझ सुगती गमन समाधिमरण, होकर जिनगुण संपत्ति होवे।।10।।

—दोहा—

तुम पदभक्ति अमोघ शर, करे मृत्यु का घात।
केवल "ज्ञानमती" सहित, मिले मुक्ति साम्राज।।11।।

ॐ ह्रीं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुभ्यो जयमाला पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शान्तये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

—गीता छंद—

अर्हंतसिद्धाचार्य पाठक, साधु को जो पूजते।
वे मोह को कर दूर, मृत्यू मल्ल को भी चूरते।।
अद्भुत सुखों को भोग क्रम से, मुक्ति लक्ष्मी वश करें।।
कैवल्य अर्हत् ज्ञानमति पा, पूर्ण सुख शाश्वत भरें।।

।। इत्याशीर्वादः ।।

प्रशस्ति

—नरेन्द्र छंद—

वीरनाथ अंतिम तीर्थंकर, जिनका शासन अब है।
जिनका नाम लेत ही तत्क्षण, क्षय होते अघ सब हैं।।
उनके शासन के अनुयायी, कुन्दकुन्द गुरु मानें।
गच्छ सरस्वति विश्वप्रथितगण, बलात्कार भी जानें।।1।।
उस ही परम्परा के ऋषिवर, शांतिसागराचार्या।
जिनके शिष्य वीरसागर ने, गुरूपट्ट को धार्या।।
ऐसे सूरि वीरसागर के, चरण कमल में आके।
'ज्ञानमती' हो गई तभी मैं, श्रमणीव्रत को पाके।।2।।
अल्पबुद्धि भी गुरुप्रसाद से, शब्द ज्ञान कुछ पाया।
कष्टसहस्री अष्टसहस्री, का अनुवाद रचाया।।
नियमसार आदिक ग्रन्थों का, हिंदी अर्थ किया है।
न्यायसार आदिक पुस्तक लिख, शास्त्राभ्यास किया है।।3।।
अनुपम श्रेष्ठ 'इन्द्रध्वज' आदिक प्रथित विधान रचे हैं।
प्रभु की अमित भक्ति ही उसमें, कारण मात्र लखें हैं।।
पंच परमगुरुपदपंकज की, भक्ति असीम हृदय में।
उनके लेश गुणों की पूजा, गुण का करे उदय में।।4।।
हस्तिनागपुर क्षेत्र पुण्यभू, सुरनर मुनिगण अभिनुत।
वीर शब्द पच्चीस शतक त्रय, वर्षायोग सुप्रस्तुत।।
आश्विन शुक्ला दशमी तिथि में, पूजा पूर्ण किया मैं।
निजभावों को निर्मल करके, दुर्गति चूर्ण किया मैं।।5।।

दोहा- ख्याति लाभ पूजादि की, वांछा नहिं लवलेश।
स्वात्मसिद्धि के हेतु मैं, पूजा रची विशेष।।6।।
यावत् जिनशासन अमल, जग में रहे प्रधान।
तावत् भविजन हेतु यह, सुखप्रद रहे विधान।।7।।

आरती पंचपरमेष्ठी

रचयित्री-आर्यिका चन्दनामती

ॐ जय पंच परमदेवा, स्वामी जय पंचपरमेदवा।
दुखहारी सुखकारी, जय जय जय देवा।। ॐ जय0।।
घाती कर्म विनाशा, केवल रवि प्रगटा।। स्वामी0।।
दर्श ज्ञान सुख वीरज, अनुपम शांत छटा।। ॐ जय0।।
अष्ट कर्म रिपु क्षय कर,सिद्ध प्रसिद्ध हुए।। स्वामी0।।
लोक शिखर पर राजें, नंतानंत रहे।। ॐ जय0।।
पंचाचार सहित जो, गणनायक होते।। स्वामी0।।
सूरि स्वात्म आराधक, सुखदायक होते।। ॐ जय0।।
गुण पच्चीस सु शोभें, अतिशय गुणधारी।। स्वामी0।।
शिष्य पठन पाठनरत, जिन महिमा न्यारी।। ॐ जय0।।
राज्यविभव सुखसंपति,छोड़ विराग लिया।। स्वामी0।।
सर्वसाधु परमेष्ठी, नरभव सफल किया।। ॐ जय0।।
पंचपरमपद स्थित, परमेष्ठी होवें।। स्वामी0।।
यही "चन्दनामती" चाह है, भव का भ्रम खोवे।। ॐ जय0।।